दुधमुँहे
बच्चों के लिये
डाबर
की नई देन....
डाबर
जन्मघुँटी
डाबर
(डा० एस० के० बर्म्मन) प्राइवेट लि०,

अप्रैल १९६६

★

विषय - सूची

संपादकीय	१	छोटा मेघ	३९
भारत का इतिहास	२	मेले के मज़े	४१
नेहरू की कथा	५	न्यायपीठ	४६
नवायनन्दिनी (धारावाहिक)	९	उत्तरकाण्ड (रामायण)	४९
प्राप्त-वस्तु	१७	मुदावती की कथा	५७
स्त्री की सहायता	२१	संसार के आश्चर्य	६१
मधु पक्षी	२९	फोटो परिचयोक्ति प्रतियोगिता	६४
गुणशर्मा की कथा	३३		

★

एक प्रति ०-७५ पैसे

वार्षिक चन्दा रु. ८-४० पैसे

नया ! धारीदार टूथपेस्ट !
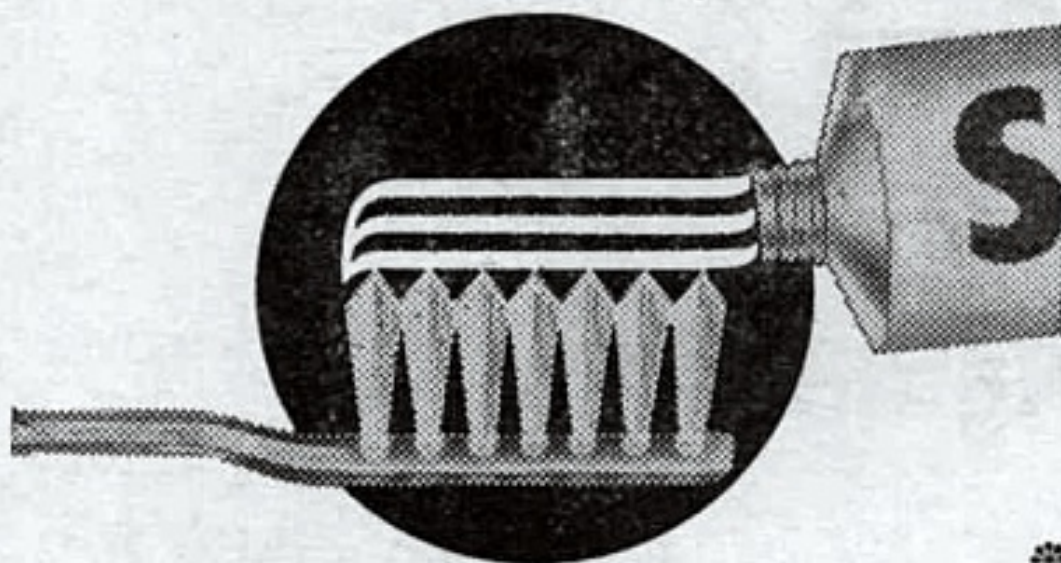
✽ कीटाणु-रोधक लाल धारियों वाला

सिग्नल

आप के सारे मुँह को साफ़ रखता है!

❶ दाँत साफ़ करता है ❷ सांस को ताज़ा रखता है

✽ लाल धारियों में हैक्साक्लोरोफ़ीन है।

दांतों की सफ़ाई में एक नई सूझ ! कीटाणु-रोधक लाल धारियोंवाला सिग्नल टूथपेस्ट आप के सारे मुंह को साफ़ रखता है। इधर सिग्नल आप के दांत साफ़ करता है, उधर लाल धारियों में मिला हैक्साक्लोरोफ़ीन आप के सांस में ताजगी ले आता है...क्योंकि हैक्साक्लोरोफ़ीन एक ऐसा संरक्षक तत्व है, जो दुर्गंधकारक कीटाणुओं को फ़ौरन नष्ट कर देता है। और यूं सिग्नल से आप का सारा मुंह साफ़ रहता है। लाल धारियों, बुलबुलों भरे झाग, पिपरमिंट के ताज़ा स्वाद और सारे मुंह में सफ़ाई के अनोखे अनुभव के कारण सिग्नल आप के सारे परिवार के मन भा जाएगा। आज ही सिग्नल खरीदिये।

...सिग्नल से दाँत साफ़ रखिए
और सांस ताज़ा

हिंदुस्तान लीवर लिमिटेड का उत्कृष्ट उत्पादन

लिंटास—SG. 2A-77 HI

दिलीप और उसके साथी मछली पकड़ने गये
वाह ! आज स्कूल बंद !
तो हम क्या करेंगे, दिलीप ?
मछली पकड़ने चलें ?
बहुत खूब !
मेरे पास धागा भी है और कँटिया भी ।
और इससे हमलोग छीप का काम लेंगे ।
तब यह लो १० पैसे केंचुआ खरीदने को ।
आखिरी केंचुआ भी खतम, दिलीप ! और अभी तक हमें कुछ भी हाथ नहीं लगा ।
तो हम कुछ केंचुआ ढूंढ निकालें ।
लेकिन केंचुए तो घास के भीतर इस तरह छिपे रहते हैं कि...
और अब अंधेरा होता जा रहा है ।
मेरे 'एवरेडी' टॉर्च से हम लोग केंचुआ ढूंढ निकालेंगे ।
देखो, मुझे एक मिल गया — यहाँ दो, तीन !
अब मछली पकड़ने की मेरी बारी है।
देखो, इसे कहते हैं तकदीर — फिर 'एवरेडी' टॉर्च ने भी तो हमारी मदद की ।
JWTUC 2929
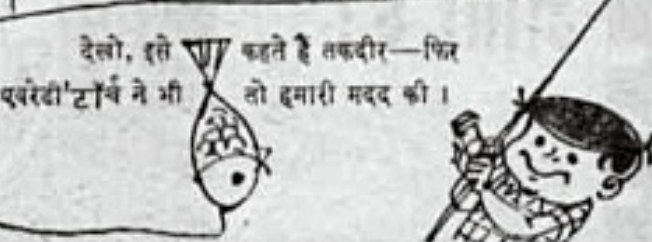
कितनी स्वादिष्ट हैं यह दौराला
की गोलियां और टाफियां !
मैं तो हमेशा इन्हें ही खाता हूँ

गोलियां और टाफियां

उत्पादन

INTERADS DC/5

चन्दामामा

संचालक: चक्रपाणी

क्या एक बच्चों का मासिक बिना धारावाहिक कथाओं के सम्भव है? हमारी राय में असम्भव है।

हम हमेशा एक से अधिक धारावाहिक "चन्दामामा" में देते आये हैं। "उत्तरकाण्ड" और "नवावनन्दिनी" के अलावा "भारत का इतिहास" और "नेहरू की कथा" भी धारावाहिक रूप से प्रकाशित किये जा रहे हैं।

अब "नवावनन्दिनी" समाप्त होने को है। हमें प्रसन्नता है कि पाठकों ने इसे पसन्द किया। एक धारावाहिक के समाप्त होने का अर्थ है कि एक और रोचक धारावाहिक शुरु भी होनेवाला है।

वर्ष: १७ अप्रैल १९६६ अंक: ८

शिवाजी की माँ देवगिरि के राजा यादव वंश की थी। पिता धैर्य साहस के लिए प्रसिद्ध मेवाड़ सिसोदिया वंश का था। साधारण मराठी सैनिक शिवाजी में स्वतन्त्र राज्य की स्थापना करने की अभिलाषा प्रबल होने लगी। परन्तु यह दुस्साहसपूर्ण इच्छा थी। अगर यह इच्छा सफल हो गई, तो लाभ भी बहुत थे।

महाराष्ट्र की स्थापना के लिए दक्खिन की सल्तनतों के कमजोर होने और दिल्ली बादशाह के उत्तर के झगड़ों में फँसे रहने ने बड़ी मदद की। १६४६ में शिवाजी ने तोरण दुर्ग ले लिया और तोरण से पाँच मील की दूरी पर उसने राजगढ़ दुर्ग का निर्माण किया। ऐसा लगता है दादाजी खोण्डदेव को यह सब पसन्द न था। १६४७ में दादाजी खोण्डदेव के मर जाने के बाद शिवाजी को और भी स्वतन्त्रता मिली। उन्होंने और भी बहुत से किले जीते। उनमें से कुछ बीजापुर सल्तनत के सामन्तों के किले थे और कई दूसरों के। इन किलों को पाने के लिए शिवाजी ने बल का प्रयोग किया। घूँस और चालाकी का भी उपयोग किया। इन किलों के अतिरिक्त उन्होंने कई नये किले भी बनाये। इस तरह उन्होंने बहुत-सी भूमि हथियाकर उसकी रक्षा के लिए उन्होंने कई पर्वत दुर्ग बनवाये।

शिवाजी के इन कार्यों के कारण बीजापुर की सल्तनत ने उनके पिता को कैद कर लिया और कहला भेजा कि शिवाजी जब तक बाज़ न आयेंगे तब तक उनको न छोड़ा जायेगा। इस कारण १६४९-५६ के बीच शिवाजी ने बीजापुर

के सुल्तानों पर हमला न किया। परन्तु उन्होंने यह समय व्यर्थ न किया। वे अपना बल बढ़ाते गये। जावली नाम का छोटा, आधा स्वतन्त्र मराठी प्रदेश चन्द्रावमोरे के शासन में था। शिवाजी ने चन्द्रावमोरे को अपने आदमियों द्वारा मरवा दिया। १६५६ में जावली को अपने वश में कर लिया। तब शिवाजी की आय दुगनी हो गई।

१६५७ में शिवाजी का पहिली बार मुगलों से मुकाबला हुआ। उस समय औरन्गजेब को बीजापुर का घेरा लगाता देख, शिवाजी ने अहमदनगर जुन्नर पर, जो मुगलों के नीचे था, आक्रमण किया। जुन्नरनगर को उन्होंने लूटा भी। तुरत औरन्गजेब ने अपनी सेना वहाँ भेजी और शिवाजी को हरा दिया। आदिलशा ने जब औरन्गजेब से सन्धि कर ली तो, शिवाजी ने भी औरन्गजेब से समझौता कर लिया। लेकिन औरन्गजेब ने शिवाजी का विश्वास न किया। चूँकि उन दिनों उसका पिता बीमार था और औरन्गजेब को उत्तर जाना था इसलिए शिवाजी से जैसे भी हो, उसने सन्धि कर ली। फिर शिवाजी ने उत्तर कोंकण पर आक्रमण किया। कल्याण, भीवन्डि और मुहलील को अपने कब्जे में कर लिया। दक्षिण में वे मुहाड़ तक चले गये।

बीजापुर के सुल्तान को उस समय मुगलों का भय न था। इसलिए उसने शिवाजी को नष्ट कर देने की ठानी। १६५९ के आरम्भ में अफजलखान नामक प्रसिद्ध सेनापति को बड़ी सेना के साथ इस आदेश पर भेजा कि शिवाजी को मृत, या जीवित पकड़कर लाया जाये। पन्द्रह दिन में अफजलखान सतारा के

उत्तर में २० मील के फासले पर वाया नामक स्थल पर पहुँचा। वह शिवाजी को प्रतापगढ़ के किले से बाहर न निकाल सका। इसलिए उसने शिवाजी से समझौते की बात को मनाने के लिए कृष्णाजीभास्कर नाम के एक ब्राह्मण को भेजा। कृष्णाजी का उचित सत्कार करके शिवाजी ने पूछा, आखिर अफ़जलखान का क्या इरादा था? कृष्णाजीभास्कर ने बताया कि अफ़जलखान के इरादे अच्छे न थे। शिवाजी के दूत गोपीनाथ ने भी जो अफ़जलखान के पास भेजा गया था, यही बात कही। धोखे का जवाब धोखा ही होता है। शिवाजी ने अपने कपड़ों के नीचे कवच धारण किया और ऊपर से यूँ दिखाया, जैसे निहत्थे हों, पर सचमुच सशस्त्र हो, वे अफ़जलखान से मिलने गये।

अफ़जल बड़ा हट्टा कट्टा, लम्बा चौड़ा आदमी था और शिवाजी नाटे थे। जब दोनों आलिंगन कर रहे थे, तो अफ़जलखान ने बायें हाथ से शिवाजी का गला दबाया और दायें हाथ से उसने शिवाजी को छुरी मारनी चाही। कवच ने शिवाजी की रक्षा की। तुरत शिवाजी ने फौलादी नाखूनों से अफ़जल को चीर फाड़ दिया और मार दिया। पास ही मराठा सैनिक छुपे हुए थे और वे बिना सेनापति के बीजापुर की सेना पर टूट पड़े। उन्हें हरा दिया और उनकी छावनी लूट ली।

कई ऐतिहासिकों का कहना है कि शिवाजी का अफ़जलखान को यूँ मारना अन्यायपूर्ण था। परन्तु मराठी ऐतिहासिकों का यह कहना कि अफ़जल ही धोखा देना चाहता था, सच मालूम होता है।

नेहरू की कथा

[२१]

काकिनाड़ा में कान्ग्रेस अधिवेषन १९२३ के दिसम्बर में हुआ। उसके अध्यक्ष मौलाना मोहम्मद अलि थे। उन्होंने हठ किया कि जवाहरलाल नेहरू कान्ग्रेस के मन्त्री हों। यद्यपि भावी कार्यक्रम की कोई रूपरेखा नहीं बनी थी, तो भी जवाहर के लिए, मोहम्मद अलि को मना करना मुश्किल था। उन्होंने मन्त्री होना स्वीकार कर लिया।

वे दोनों एक दूसरे का आदर करते थे। परन्तु छोटी मोटी बातों में उनका मतभेद भी था—विशेषतः धर्म आदि के बारे में दोनों के विचार मेल नहीं खाते थे। मोहम्मद अलि कट्टर धार्मिक थे। जवाहरलाल नेहरू को धर्म में ही विश्वास न था। जब कभी मौलाना धर्म की बात छेड़ते, तो जवाहरलाल नेहरू विषय बदल दिया करते।

उस साल के बाद, मोहम्मद अलि ने कान्ग्रेस की राजनीति में कोई विशेष भाग नहीं लिया। १९३० में, वे कान्ग्रेस के प्रस्ताव का धिक्करण करके, लन्डन में राऊन्ड टेबल कान्ग्रेस में भी उपस्थित हुए।

जवाहर ने उनको अन्तिम बार १९२९ लाहौर में, कान्ग्रेस आधिवेषन में देखा था। जवाहर के अध्यक्षीय भाषण की, श्री मोहम्मद अलि ने खूब नुक्ताचीनी की। उन्होंने कहा—"जवाहर मैं बताये देता हूँ। तुम्हारे साथी, तुम्हें छोड़ देंगे। वे तुम्हें फाँसी पर चढ़ा देंगे।" जवाहरलाल नेहरू को जब नैनी जेल में उनकी मृत्यु की खबर मिली, तो वे बड़े दुःखी हुए।
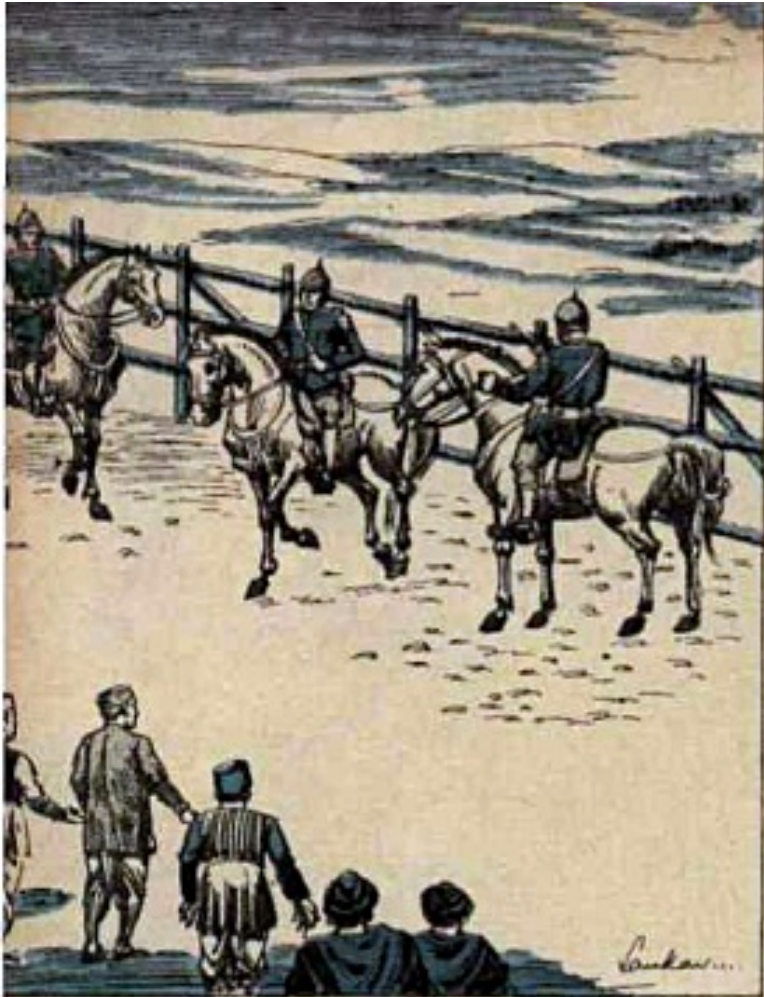
काकिनाड़ा के कान्ग्रेस अधिवेषन के बाद १९२४ में जवनरी में कुम्भ मेला हुआ। उस पर्व के दिन लाखों यात्री आकर, त्रिवेणी संगम में स्नान करते हैं। उस साल गंगा में बड़ा तेज़ बहाव था, इसलिए अधिकारियों ने वहाँ स्नान निषिद्ध कर दिया। जवाहर का ख्याल था कि यद्यपि यह निषेध लोगों के हित में था, तो भी अनावश्यक था—क्योंकि घाटों में यदि नियमित लोगों के स्नान के लिए निश्चित व्यवस्था कर दी जाती, तो इस प्रतिबन्ध की आवश्यकता ही न होती।

इस प्रतिबन्ध के बारे में, स्वर्गीय मालवीय और स्थानाधिकारियों में चिट्ठी पत्री हुई और कुछ कहा सुनी भी हुई। मालवीय जी ने जिला मेजिस्ट्रेट को चिट्ठी लिखी कि उनको संगम में स्नान करने की अनुमति दी जाये। मेजिस्ट्रेट ने अनुमति देने से इनकार कर दिया। मालवीय जी ने कहा कि वे दो सौ आदमियों के साथ सत्याग्रह करेंगे और वे उनको लेकर त्रिवेणी चले आये। जवाहर स्नान करने तो नहीं आये थे, पर लोगों को देखने अवश्य आये थे। कुछ भी हो, वे इस सत्याग्रह में फंस गये।

त्रिवेणी के रास्ते में रुकावट डाली गई। उसके पास ही घुड़सवारों को तैनात किया गया। सत्याग्रही जब रुकावट के पास आये, तो पोलीस ने उनको रोक दिया। सत्याग्रही वहीं रेत के पास बैठ गये। समय बीतता जाता था। सूर्य चढ़ता जाता था, ऊपर धूप और नीचे रेत गरम हो रही थी और सत्याग्रहियों के पेटों में भूख लग रही थी। बहुत-से सत्याग्रही ऊब गये। जवाहर ने अपने पास के लोगों से कहा—"अरे, कब तक बैठा जाये, चलो, हम रुकावट को पार करके जायें।"

कई जवाहर के साथ उठे और चल पड़े। किसी ने उनको राष्ट्रीय पताका दी। उन्होंने उसे रुकावट पर लगा दिया। कई ने उसे फाँद लिया और कई ने उसमें छेद कर लिया, पोलीस ने उनको रोकने का प्रयत्न किया। पर जवाहर यह सब इस तरह देख रहे थे, जैसे कोई तमाशा देख रहे हों।

घुड़सवारों ने किसी को मारा पीटा नहीं, अपनी लाठियों से लोगों को पीछे हटाने लगे। आखिर जवाहर परली तरफ़ चले गये और गंगा में स्नान करके, जब आये, तो मालवीय जी वगैरह तब भी वहीं बैठे थे। सत्याग्रहियों और रुकावट के बीच में, पोलीस घुड़सवारों और मामूली सिपाहियों की दीवार-सी थी। जवाहर मालवीय जी के पास ही थे। कुछ देर बाद, मालवीय जी बिना किसी से कुछ कहे, एक छलाँग में, पोलीस और घुड़सवारों को फाँदकर चले गये। अगर कोई मामूली आदमी भी ऐसा काम करे, तो आश्चर्य होता है और जब मालवीय जी जैसे वृद्ध और दुर्बल व्यक्ति ने यह किया, तो जवाहर को अत्यन्त आश्चर्य हुआ।

मालवीय जी के पीछे और लोग भी चले गये। उनको रोकने के लिए पोलीस ने खास प्रयत्न नहीं किया। थोड़ी देर बाद पोलीस चली गई। बाद में भी सरकार ने इस विषय में कोई और कार्यवाही नहीं की।

१९२४ में गान्धी जी को बड़ी जबर्दस्त बीमारी हुई। उनको जेल से अस्पताल लाया गया। जब तक उनकी बीमारी ने कम होना न शुरु किया, तो सारा देश चिन्तित रहा। वे अस्पताल में भी कैदी के रूप में ले जाये गये थे। परन्तु उनको

कुछ मित्रों को देखने का मौका मिला। जवाहर जी अपने पिता जी मोतीलाल जी के साथ उनको देखने गये।

बीमारी कम होने के बाद सरकार ने गान्धी को जेल न भेजा। उनको छोड़ दिया गया। वे बम्बई के पास जुहू में स्वास्थ्य लाभ करने गये। नेहरू जी वहाँ एक कुटी किराये पर लेकर रहने लगे।

जवाहर जी के लिए यह अवकाश-सा था। वे समुद्र में स्नान किया करते, तट पर दौड़ा करते। मोतीलाल जी स्वराज पार्टी का दृष्टिकोण गान्धी जी को समझाकर उनको अपनी ओर करना चाहते थे और जवाहर गान्धी जी का भावी कार्यक्रम जानना चाहते थे। कुछ भी हो, दोनों अपने उद्देश्य में सफल न हो सके।

गान्धी जी स्वराज पार्टी के विषय में बिल्कुल रजामन्द न हुए। दोनों पक्ष, बड़ी मर्यादा के साथ एक दूसरे के दृष्टिकोण का आदर करते रहे। जवाहर के किसी सन्देह का निवारण न हुआ। क्योंकि गान्धी जी को भावी कार्यक्रम के बारे में बहुत सोचने विचारने की आदत न थी। गान्धी जी ने उनको प्रजा सेवा करते रहने को कहा और आन्दोलन आरम्भ होने तक प्रतीक्षा करने की सलाह दी। यही नहीं वे अपने उद्देश्य के बारे में स्पष्ट न थे। जवाहर को यह न भाता था कि जब कुछ यह कह रहे थे कि कान्ग्रेस का उद्देश्य पूर्ण स्वतन्त्रता था, तो कई सप्रू की श्रेणी के लोग ब्रिटिश साम्राज्य की प्रशंसा भी करने लगे। उदारदलवालों और जवाहर जैसे नेताओं के बीच एक बड़ी खाई-सी बन गई।

नवाबनन्दिनी

[८]

जगतसिंह को जेल से छुड़ाने के लिए एक निवेदन पत्र लेकर अभिरामम्वामी पाँच आदमियों के साथ दिल्ली के लिए निकल पड़ा। छहों घोड़ों पर सवार थे। निवेदन को सफल करने के लिए बहुत-से धन की आवश्यकता थी। इसलिए अयाशा ने अभिरामस्वामी को बहुत-से रत्न और बहुत-सा धन दिया। उसने दिल्ली के अन्तःपुर में और दरबार में अपने परिचित लोगों के नाम चिट्ठियाँ भी लिखीं। मानसिंह की बहिन यानि अकबर की बेगम को उसने अपना एक निवेदन पत्र भी भेजा।

अयाशा अभिरामस्वामी के कुछ कोशिश करने के बाद म्वयं जाकर दिल्ली में जगतसिंह के छुटकारे के लिए प्रयत्न करना चाहती थी। परन्तु वह मानसिंह के यहाँ बन्दी थी। और वह ऐसा न कर सकती थी। फिर भी वह चिन्तित न थी। क्योंकि उसने बन्दी होने से पहिले ही आवश्यक व्यवस्था कर दी थी।

पाँचवें दिन अभिरामस्वानी अपने साथियों के साथ कानपुर पहुँचा। उसे कानपुर में मालूम हुआ कि अकबर दिल्ली में न था और आगरे में था। यह उसे शुभ शकुन-सा

दामोदर मुखर्जी

लगा। क्योंकि कानपुर से आगरा दो दिन में पहुँचा जा सकता था।

छहों घुड़सवार दुपहर के बाद कानपुर पहुँचे। और चौक के पास एक बढ़ के पेड़ के नीचे उतरे। घोड़े थक चुके थे और सवारों की भूख के कारण बुरी हालत हो रही थी। अभिरामस्वामी ने एक बढ़ के पेड़ के नीचे पड़ाव डाला तो बाकी पाँचों ने एक और बढ़ के पेड़ के नीचे।

अभिरामस्वामी ने अपने पीठ पर लटकते चमड़े के थैले को ज़मीन पर बिछा लिया और छाती पर बाँधी गठरी को तकिया बनाकर लेट गया। उस गठरी में जगतसिंह का निवेदन पत्र और अयाशा के दिये हुए गहने आदि थे।

बाकी पाँच कुँए के पास जाकर हाथ पैर धोकर, घोड़ों के लिए दाना और अपने खाने-पीने के लिए चीज़ों के तैयार करने में लग गये।

वे पाँचों मिलकर भोजन किया करते थे। "आपके लिए आज क्या बनाया जाये?" उन्होंने अभिरामस्वामी से पूछा। "मुझे और कुछ नहीं चाहिए, थोड़े-से आटे में थोड़ा-सा शक्कर मिलाकर ले आओ।"

उनके रसोई शुरु करते करते शाम हो गई। रसोई होने से पहिले उन्होंने बत्तियाँ लाकर जला दीं। आठ बजे वे भोजन करने के लिए बैठने ही वाले थे कि चौक में कहीं आग लग गई। हो हल्ला मचा। अभिरामस्वामी ने अपने साथियों से कहा—"देख क्या रहे हो, जाओ उन लोगों की मदद करो, जिनके मकान जल रहे हैं।"

उन्होंने खाना छोड़ दिया और वे आग बुझाने में लग गये।

इतने में पास एक स्त्री रोती रोती चिल्लाई—"अरे, मेरा बेटा....बचाओ, बचाओ।" अभिरामस्वामी उधर भागा और उसने जलते घर में से एक लड़के को बाहर निकाला और उस लड़के को मौत से बचाकर उस स्त्री को दे दिया।

आग बुझाते बुझाते बारह बज गये। अभिरामस्वामी के लोग अपनी जगह आये। अभिरामस्वामी भी उनके साथ आया। जब वे वापिस आये, न तो वहाँ घोड़ा था, न कोई खाने की चीज़, न कोई लोटा या बर्तन ही अभिरामस्वामी ने चमड़े के थैले के नीचे जो पोटली छुपा रखी थी, वह भी गायब थी।

अभिरामस्वामी ढह-सा गया। उसने कभी न सोचा था कि ऐसा भी गुज़रेगा। बहुत दिनों से किया गया प्रयत्न, एक स्वप्न की तरह काफ़ूर हो गया।

उन्होंने बची रात बढ़ के नीचे ही काट दी। अगले दिन सवेरे ही वे कोतवाल के पास गये। वह बड़ा सख्त आदमी था। उसकी कचहरी बादशाह के दरबार से भी भयंकर थी। यह कोतवाल, जो कोई सामने आता, कारण हो या न हो, दण्ड दिया

करता। अभिरामस्वामी अभी शिकायत कर ही रहा था कि कोतवाल ने उन्हें देखकर कहा—"ये तो चोर मालूम होते हैं। यह जो सन्यासी के वेष में है, वह तो बड़ा पहुँचा हुआ चोर मालूम होता है। ये कहीं से यहाँ चोरी करने आये हैं और मुझे यह बताने के लिए कि वे शरीफ़ लोग हैं, मेरे पास चोरी की शिकायत लेकर आये हैं। पहिले इन्हें कैद में डाल दो।" उसने अपने नौकरों को हुक्म दिया।
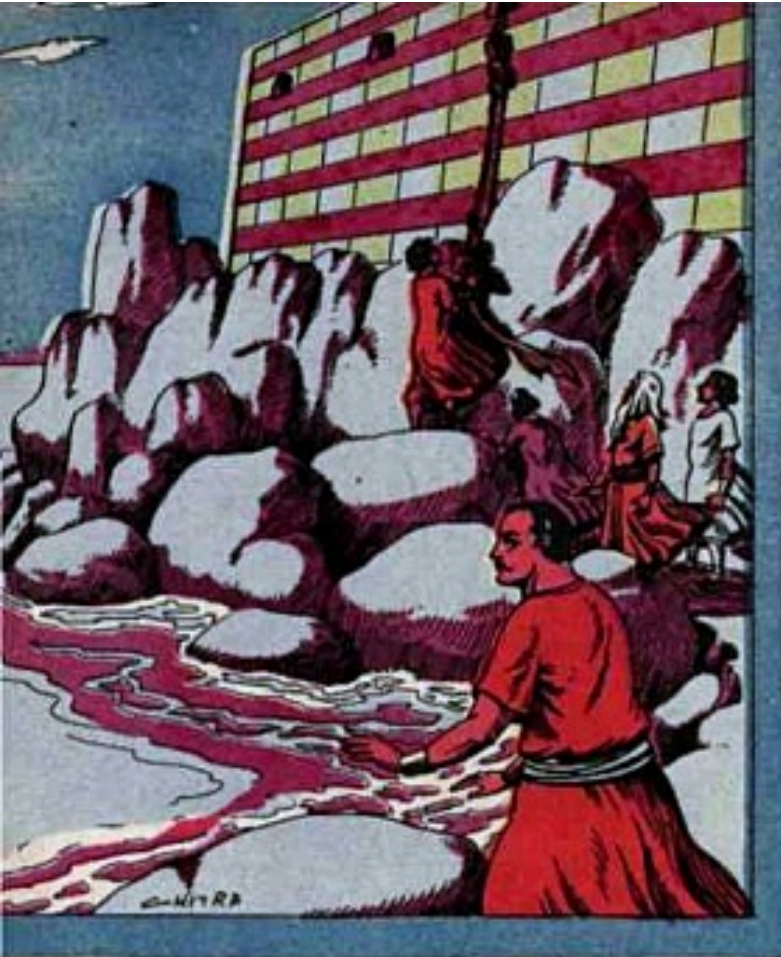
अभिरामस्वामी बड़ी आफ़त में फँसा। जेल में अन्धेरा था। बुरी बू आ रही थी। उनकी काज़ी के सामने सुनवाई होनी थी। सुना जाता था कि काज़ी कोतवाल से भी बढ़कर था। यह सोचकर कि वह जरूर उनको सज़ा देगा, उन्होंने जेल से भाग निकलने की सोची। न पिछले दिन उन्होंने कुछ खाया था, न आज ही। सब बड़े थके हुए थे। फिर भी उस दिन आधी रात को ऊँची एक खिड़की के सीखचे तोड़कर वे एक एक करके बाहर निकल गये।

सवेरे होते होते छः आदमी दो गुटों में बँट गये। अभिरामस्वामी के साथ आये हुए तीन आदमियों को पटना वापिस जाकर ताजखान के घर जाकर नवाबनन्दिनी से जो कुछ गुज़रा था, उसे बताने भेजा और दो साथियों को लेकर अभिरामस्वामी ने कुछ भी हो, आगरा जाने का निश्चय कर लिया था।

जो तीन पटना पहुँचे थे, वे अपना काम न कर सके, क्योंकि ताजखान के घर नवाबनन्दिनी अयाशा न थी। वह मानसिंह के यहाँ कैद थी। न वे उसे देख सके, न कैद में पड़े जगतसिंह को ही देख सके। अभिरामस्वामी और जो उसके साथ

आगरे के लिए निकले थे, उन्होंने जंगली फल और नदी का पानी पीकर अपनी भूख-प्यास मिटाई। रात के समय वे अपने को पेड़ की टहनियों से बाँध लेते और वहीं सो रहते। इस तरह दो दिन चलकर वे तीसरे दिन आगरा, यमुना नदी के उत्तर में, एक जंगल में पहुँचे।

वहाँ, वे रास्ते पर जा रहे थे कि अभिरामस्वामी को घोड़े के चिह्न दिखाई दिये। जब वे कुछ दूर गये तो चिह्न दक्षिण की ओर एक और रास्ते पर मुड़े। वे यूँ कुछ दूर और आगे गये और फिर जंगल में गुम हो गये। अभिरामस्वामी ने अपने एक आदमी को बुलाकर कहा—"जंगल में जाकर देखो कि कुछ दिखाई देता है कि नहीं।"

वह आदमी चुपचाप गया और चुपचाप वापिस आकर उसने कहा—"पास में ही हमारे छहों घोड़े और हमारी चीज़ें हैं और उनके साथ दस आदमी हैं।" मालूम हो गया कि उन्होंने ही चोरी की थी।

"मैं आगरा जाकर सिपाहियों को लाता हूँ। तुम दोनों यहीं रहो और चोरों पर नज़र रखो। यदि मेरे आने से

पहिले वे यहाँ से कहीं और जायें तो तुम में से एक उनके पीछे पीछे होशियारी से जाना और यह मालूम करके आना कि उन्होंने अपना अगला पड़ाव कहाँ डाला है।" अभिरामस्वामी उनसे यह कहकर आगरा की ओर निकल पड़ा। उसने सोचा था कि वह शाम तक वापिस आ जायेगा, पर वह अगले दिन सवेरे तक, कोतवाल और सिपाहियों को साथ लेकर वापिस न आ सका।

उनके आने तक चोर वहीं थे। वे आसानी से पकड़ लिये गये। अभिरामस्वामी ने और उनके साथियों ने जो कुछ खोया था, वह सब उनके पास बरामद हुआ, पर वे तुरत अभिरामस्वामी के हाथ न आये। कोतवाल ने उनको ले लिया। काजी के सामने चोरों को पेश करना था। अभिरामस्वामी आदि को अपनी चीज़ों को पहिचानना था। फिर साबित करना था कि वे उनकी ही हैं, तब तक उनको वे चीज़ें न मिलतीं। अभिरामस्वामी निराश हो गया।

उसके पास कानी कौड़ी न थी। भीख माँगकर दिन काटने थे। एक राजपूत सैनिक उसको दिखाई दिया, उसने एक रुपया उसको दिया और आश्वासन दिया कि उनकी चीज़ें उनको जल्दी ही वापिस दिलवा देगा। अभिरामस्वामी हाथ पर हाथ रखकर न बैठा रहा। वह सारे नगर में घूमा। जो कोई हिन्दू और मुसलमान दिखाई देता, उसको अपनी कहानी सुनाता। जल्दी ही उसकी कहानी सारे शहर में फैल गई।

पता लगा कि अयाशा आगरा आई हुई थी और एक उमराव के घर ठहरी हुई थी। किन्तु अभिरामस्वामी उससे न मिल

सका। परन्तु एक और तरीके से काम बनता नज़र आ रहा था। सुना गया कि बादशाह से हुक्म दिया हुआ था कि कोतवाल के पास जो चीज़ें थीं, वे उसके पास पहुँचा दी जायें। अयाशा कोई चाल चलती लग रही थी। जो जो चीज़ें जहाँ जहाँ पहुँचनी थी वे वहाँ वहाँ पहुँचा दी गई थी। इस तरह अभिरामस्वामी का भार कुछ हल्का हो गया था। उसने अपने प्रान्त जाने की ठानी। इससे पहिले उसने अयाशा से मिलने का एक और प्रयत्न किया। पर उसका प्रयत्न सफल न हुआ।

अगले दिन सवेरे वह कोतवाल को देखने गया। कोतवाल ने उसको और उसके अनुचरों को पाँच सौ मुहरें देकर उनको अपने घोड़े ले जाने के लिए कहा। फिर वह अयाशा को देखने उस उमराव के घर गया। अयाशा तो नहीं मिली, पर उसने अभिरामस्वामी के पास एक चिट्ठी भिजवाई।

"शायद हम इस जन्म में न मिल सकेंगे। मेरी यही इच्छा है कि युवराज जगतसिंह हमेशा सुखी, सुरक्षित रहें। मुझे उन्हें देखने की ज़रूरत नहीं है। मेरे

बारे में किसी को भी चिन्तित होने की ज़रूरत नहीं है। इसके बाद मेरे बारे में आप तक ख़बर पहुँचने की गुंजाईश नहीं है।" अयाशा ने लिखा।

यह पढ़कर अभिरामस्वामी की आँखों में तरी आ गई। वह अपने दोनों साथियों और घोड़ों को लेकर चला गया।

अयाशा को किश्ती से कटक पहुँचना था। कटक से एक मील दूर, महा नदी के किनारे, घाट पर उस्मानखान दो आदमियों के साथ अयाशा की इन्तज़ार कर रहा था। नदी में किश्तियाँ अधिक थीं।

दुपहर के बाद वह किश्ती दिखाई दी जिसमें अयाशा आ रही थी। वह निश्चित समय के बाद आ रही थी, उस्मानखान ने उसकी खिड़की में से किसी को हाथ हिलाते देखा। पर उसने यह भी देखा कि उसकी किश्ती में धीमे धीमे पानी भरता जा रहा था और वह डूब रही थी।

उस्मान छाती तक पानी में गया। "अयाशा....बाहर कूदो, जो और लोग अन्दर हैं, उनको भी कूदने के लिए कहो। किश्ती डूब रही है।" वह चिल्लाया।

खलासी भी किश्ती को डूबने से न बचा सके। वे देखते खड़े रहे।

"उस्मान, किनारे चले जाओ। क्या काम है यह!" अयाशा चिल्लाई। किश्ती में लोग रोने धोने लगे। अयाशा ने किश्ती से बाहर आने की कोशिश न की। उस्मान को जाने का ईशारा करती, वह किश्ती के साथ पानी में डूब गई।

(अगले अंक में समाप्त)

प्राप्त-वस्तु

विक्रमार्क ने हठ न छोड़ा। वह पेड़ के पास गया। पेड़ पर से शव उतारकर, कन्धे पर डाल, हमेशा की तरह चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा—"राजा, तुम इसकी फिक्र न करो कि तुम्हें इतना कष्ट उठाना पड़ रहा है। क्योंकि तुम भी समुद्रशूर की तरह कष्ट काल में शुभ प्राप्त कर सकते हो। ताकि तुम्हें थकान न मालूम हो, मैं समुद्रशूर की कथा सुनाता हूँ। सुनो।" उसने यूँ कहानी सुनानी शुरु की।

हर्षपुर में जिसका हर्षवर्मा राजा था, समुद्रशूर नाम का एक बड़ा व्यापारी था। वह एक बार माल लेकर, सुवर्णद्वीप के लिए समुद्र यात्रा पर निकल पड़ा। यात्रा ठीक तरह ही चली, पर सुवर्णद्वीप समीप ही

वेताल कथाएँ

था कि आकाश में घने बादल घिर आये। तूफ़ान चलने लगा। प्रलय-सी आ गई और समुद्रशूर का जहाज़ डूब गया। डूबते जहाज़ से समुद्रशूर कूद पड़ा और तैरने लगा। वह यूँ तैर रहा था कि उसकी ओर एक शव बहता आया। समुद्रशूर ने उसका चप्पू की तरह उपयोग किया और वह तट तक पहुँच गया।

जब किनारे पर उसने शव को ध्यान से देखा, तो उसकी कमर में एक पोटली को पाया और जब पोटली खोलकर देखी, तो उसमें एक अमूल्य कंठाभूषण था। समुद्रशूर ने बहुत से अमूल्य रत्न देखे थे, पर उसने भी उतना अमूल्य रत्न न देखा था। जो माल वह समुद्र में खो बैठा था, उससे कई गुना अधिक कीमती वह कंठाभूषण था, यह जानकर उसे बड़ी खुशी हुई। समुद्रशूर कलशपुर नामक नगर में गया और नगर के बाहर के मन्दिर में वह लेट गया। क्योंकि वह बहुत देर तक तैरा था, इसलिए लेटते ही उसको नीन्द आ गई। उस कंठाभूषण को हाथ में रखकर ही वह गहरी नीन्द सोने लगा।

थोड़ी देर बाद नगर रक्षक उस तरफ़ आये, उन्होंने उसके हाथ का कंठाभूषण पहिचान लिया। वह चंद्रसेना नाम की राजकुमारी का था। उसे चोर उठा ले गये थे। यह सोचकर कि वह सोनेवाला ही चोर था, नगर रक्षक उसको उठाकर राजा के पास ले गये। राजा तब बाग में था।

"तुम कौन हो? तुम्हें यह हार कैसे मिला?" राजा ने पूछा।

समुद्रशूर ने जो कुछ जैसा जैसा गुजरा था, वैसा वैसा सुना दिया। जो शव मुझे मिला था, वह अब भी समुद्र के किनारे

है। चाहें, तो आप किसी को भेजकर मालूम कर लीजिये।

इससे पहिले कि राजा कुछ कह पाता, कहीं से कोई चील आई और राजा के हाथ का कंठाभूषण उठाकर तेज़ी से ले गई।

भले ही चीज़ चली गई हो, पर शुरु की गई तहकीकात को तो पूरा करना ही था। इसलिए राजा ने अपने आदमियों को समुद्र तट पर भेजा। शव तब भी वहीं था। क्योंकि वह उस नगर के प्रसिद्ध चोर का शव था, इसलिए सैनिकों ने उसे पहिचान लिया और राजा को उसकी सूचना भी दे दी। साबित हो गया कि जो कुछ समुद्रशूर ने कहा था, वह सच ही था।

राजा दयालु था, उसने समुद्रशूर को कुछ धन दिया। कुछ व्यापार का माल भी। उसे एक जहाज़ पर सवार कर उसके देश भेज दिया।

इस बार समुद्रशूर सुरक्षित समुद्र पार कर गया। वह एक कारवाँ के साथ अपना माल लेकर हर्षपुर के लिए निकल पड़ा। वे सब जंगल के रास्ते जा रहे थे, रात के समय उन्होंने एक जगह पड़ाव किया।

जब चोरों ने उन पर धावा बोला। उनका माल लूटा और जो कोई मिला उसे मारने लगे। माल गया तो गया समुद्रशूर जान बचाकर एक बढ़ के पेड़ पर चढ़ गया और पत्तों के पीछे छुप गया। चोर सारा सामान लूटकर भाग गये।

फिर भी सवेरे काफ़ी रोशनी होने तक समुद्रशूर पेड़ पर ही रहा। जब इधर उधर देखकर उसने पेड़ पर से उतरना चाहा, तो एक टहनी के खोल में उसे कोई चीज़ चमकती दिखाई दी। समुद्रशूर ने जब पास जाकर देखा, तो

वह राजकुमारी का कंठाभूषण ही था। वह आभूषण समुद्र के पार कलशपुर में एक चील उठा ले गयी थी और अचानक उस भयंकर जंगल में उसे फिर मिल गया था। यह सोच समुद्रशूर को अत्यन्त आश्चर्य हुआ।

वह पेड़ पर से उतर आया। अपने नगर पहुँचा। उसने वह कंठाभूषण, अपने राजा को ही बेच दिया। व्यापार छोड़कर, आराम से रहने लगा।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर पूछा—"राजा, मुझे एक सन्देह है। समुद्रशूर ने जैसे भी हो, उस गहने को कलशपुर के राजा को न देकर, क्यों अपने पास रखा? क्या लाभ के कारण? और क्या यह सोच कर कि फिर उस पर चोरी का अपराध थोपा जायेगा? इस सन्देह का अगर तुमने जान बूझकर उत्तर न दिया, तो तुम्हारे सिर के टुकड़े टुकड़े हो जायेंगे।"

इस पर विक्रमार्क ने कहा—"उस कंठाभूषण को राजा दो बार खो चुका था, कैसे कहा जाये कि वह फिर न खोयेगा, क्यों उसे छोड़ा जाये? यही नहीं, पहिली बार उसका माल समुद्र में डूब गया था, दूसरी बार उसे चोर उठा ले गये थे। यह सोचकर कि व्यापार में उसे फिर फायदा न होगा, उसने उसे छोड़ दिया था। बिना समुद्र यात्रा किये, वह उस गहने को राजा तक पहुँचा भी न सकता था। यह सब सोचकर ही समुद्रशूर ने वह कंठाभूषण स्वयं रख लिया था।"

राजा का इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ अदृश्य हो गया और पेड़ पर जा बैठा।

स्त्री की सहायता

वर्धमान नाम के राजा ने मंजरी नाम की राजकुमारी से विवाह किया। मंजरी बहुत सुन्दर थी, इसलिए वह हमेशा उसके साथ रहता और राजकाज का काम भी न देखता। इस प्रकार पाँच वर्ष गुज़र गये। मन्त्री आदि को दो प्रकार की चिन्ता होने लगी। एक चिन्ता तो यह थी, राजा शासन कार्य न देख रहा था और दूसरी चिन्ता यह थी कि मंजरी पाँच साल से गृहस्थी कर रही थी, पर वह गर्भवती नहीं हुई थी।

ज्योतिषियों ने मंजरी की जन्मकुंडली देखकर बताया कि उसके भाग्य में सन्तान न थी। जब यह बात मन्त्रियों ने उसके पास पहुँचाई, तो उसने कहा कि यह बात वह बचपन में ही जानती थी। पर चूँकि सिंहासन का उत्तराधिकारी होना चाहिये, इसलिए मंजरी ने कहा कि राजा एक और बार शादी कर ले।

फिर भी राजा ने मंजरी की सलाह नहीं मानी—"यदि मैंने दूसरी शादी कर ली, तो सौतों में होड़ होने लगेगी। यह मैं नहीं सह सकता। मुझे इसका कोई दुःख नहीं है कि मेरी सन्तान नहीं है। किसी योग्य लड़के को गोद में ले लिया गया, तो देश को एक युवराज भी मिल जायेगा।" राजा ने कहा।

"मैं अपनी सौत को अपनी छोटी बहिन की तरह देखूँगी। मेरी बात का विश्वास कीजिये।" मंजरी ने कहा।

"पर इसका क्या भरोसा कि वह तुम्हें अपनी बड़ी बहिन की तरह देखेगी?

राम मोहन

जब तक तुम जिन्दा हो, तब तक मैं दूसरी शादी करूँ, यह कभी नहीं हो सकता।" राजा ने कहा।

राजा को स्त्री के साथ सारा समय व्यर्थ करता देख, सेनापति को एक बात सूझी। प्रजा और राजा में कोई भी सम्बन्ध न था। कोई युवराज भी न था, जिस पर प्रजा को भरोसा हो। इस हालत में उसने यदि राजा को हरा दिया, तो राजा की मदद करनेवाला कोई न होगा। इसलिए उसने अपने राजकर्मचारियों को अपनी ओर कर लिया और अपने सैनिकों से राजमहल का घेरा डलवा दिया। राजधानी में रातों रात ही हल्ला हो गया। राजा के अंगरक्षक और नौकर मार दिये गये। एक कर्मचारी के कारण, जो सेनापति का अंगरक्षक का काम कर रहा था, राजा प्राण बचाकर अपने राज्य के बाहर के वन में पहुँचा।

राजा न जानता था कि मंजरी का क्या हो गया था। राजा यह सोचकर बड़ा दुःखी हुआ कि वह भी और कर्मचारियों के साथ राजमहल में मार दी गई होगी। जब दुःख सम हुआ तो उसको जीवन से

और राज्य से विरक्ति हो गई। उसने वन में ही एक पर्णशाला बना ली और वहाँ तपस्वी की तरह रहने लगा।

जैसा कि राजा ने सोचा था, मंजरी मरी न थी। वह आदमी का वेष धारण कर, घोड़े पर सवार हो, निर्भय हो, जंगल में चली आयी। छुटपन में ही जब ज्योतिषियों ने उसको बताया था कि उसके सन्तान न थी, तभी उसने घुड़सवारी, तल्वार से लड़ना वगैरह, सीख लिया था।

अब भी वह जंगल में आदमी का वेष पहिनकर इधर उधर घूमकर शिकार किया करती और अपने पति को दूर से ही देखा करती। सिवाय इसके कि उसके पति को फिर से राज्य मिले, उसके मन में और कुछ न था।

एक दिन उसको एक विचित्र अनुभव हुआ। शाम को जब वह एक जलाशय के तट पर बैठी थी, तो पानी में से एक साँप तैरता किनारे पर आया। चूँकि साँप बहुत बड़ा था, उसको जीवित छोड़ना अच्छा न था। मंजरी ने झट तल्वार निकाली और उसका सिर काट दिया। सिर कटते ही उसके मुख से एक नीली

मणि निकली। मणि के गिरते ही साँप का शरीर एक भयंकर राक्षस के शरीर में बदल गया।

यह परिवर्तन देख, मंजरी ने चकित होकर पूछा कि कहीं उस नीली मणि के मुख में होने के कारण तो राक्षस साँप के रूप में न था। उसने झट वह मणि उठाई। उसे धोया और अपने मुख में रख लिया। वह भी साँप बन गई। राक्षस का घर कहीं जलाशय में ही होगा, यह जानने के लिए वह साँप के रूप में पानी में गई।
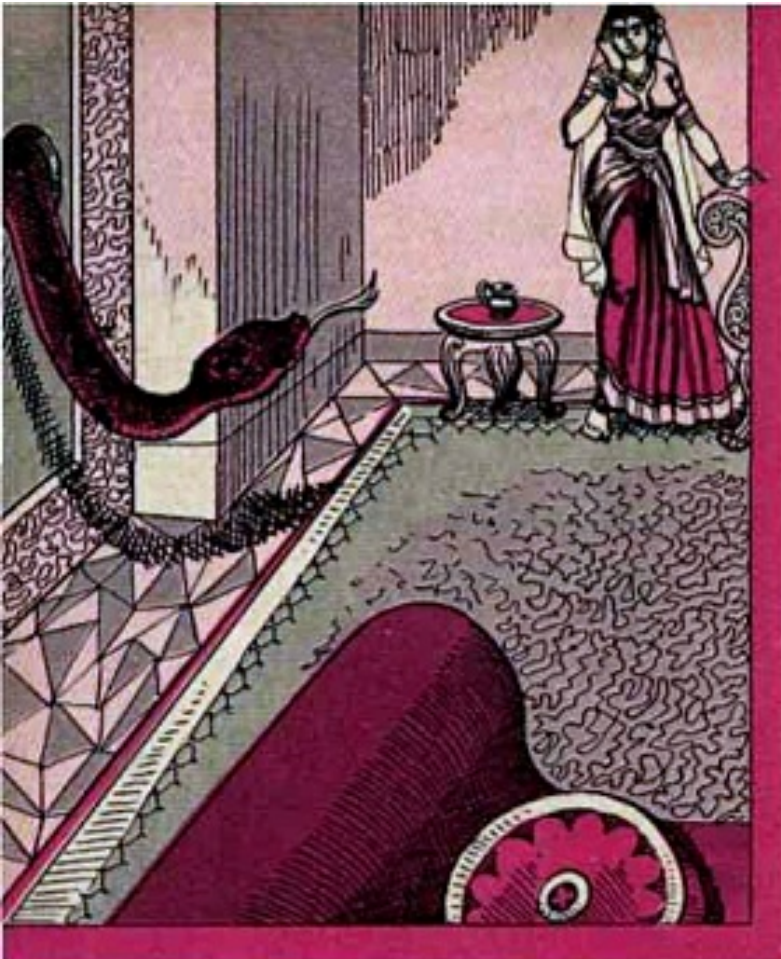
मंजरी के पानी में बहुत देर घूमने फिरने के बाद पानी में एक द्वार-सा दिखाई दिया। उस द्वार में से वह अन्दर गई। वहाँ सीढ़ियाँ थीं, सीढ़ियों पर से जब वह ऊपर गई तो पानी की तह के नीचे एक और द्वार था। उस द्वार में भी एक छेद था। ये छेद राक्षस ने ही बना रखा था।

मंजरी उस छेद में से घुसकर अन्दर गई। वहाँ एक बड़ा कमरा था। उसमें एक खूबसूरत लड़की बैठी थी। वह साँप को देखते ही घबरायी, उठ खड़ी हुई और काँपने लगी।

तुरत मंजरी ने अपने मुख से नीली मणि निकाली और अपने मामूली रूप में आ गई। "डरो मत, शायद तुमने मुझे भी राक्षस समझा हो। मैंने उस राक्षस को मार दिया है। तुम कौन हो? यहाँ क्यों हो? मैं तुम्हारी क्या मदद कर सकती हूँ?"

"मैं वज्रगिरि राजा की लड़की हूँ। मेरा नाम सौदामिनी है। कल ही मुझे यह राक्षस बाँधकर लाया था। वह डरा रहा है कि यदि मैं तीन दिन में उसकी पत्नी न

हो गई, तो वह मुझे मार देगा। यदि तुमने मुझे मेरे घर भेज दिया, तो तुम्हारा भला कभी न भूलूँगी।" उसने कहा।

"मैंने कहा है न कि अब तुम्हें राक्षस से डरने की कोई ज़रूरत नहीं है। मैं इस कैद से तुमको स्वयं ले जाऊँगी। उसके बाद सोचेंगे कि कैसे तुमको तुम्हारे पिता के घर पहुँचाया जाये।" मंजरी ने कहा।

वह फिर नीली मणि को मुख में रखकर साँप के रूप में बाहर गई और छेद में से सौदामिनी को नीली मणि दे दी। उसकी मदद से सौदामिनी साँप के रूप में बाहर आयी और सीढ़ी पर प्रतीक्षा करती मंजरी से मिली।

जलाशय के द्वार से भी वे उसी तरह निकलीं। उसके बाद दोनों तैरती जलाशय से अपने निजी रूप में चली आई।

तब तक आधी रात हो चुकी थी। मंजरी ने फिर पुरुष वेष धारण किया। "अब मैं तुम्हें एक बड़े आदमी के आश्रम में ले जाती हूँ। तुम मेरे बारे में उससे किसी भी हालत में न कहना। तुम उनसे कहना कि वे तुम्हें तुम्हारे घर भेज दें

और कोई बात न पूछें। हम जल्दी ही फिर मिलेंगी।" उसने सौदामिनी से कहा। फिर वे दोनों राजा के पर्णशाला तक चलकर गईं। वहाँ मंजरी, सौदामिनी से विदा लेकर चली गई।

सौदामिनी के किवाड़ खटखटाते ही राजा ने उठकर दरवाज़ा खोला। अपरिचित स्त्री को देखकर वह चकित हुआ—"क्या चाहिए?" उसने पूछा। सौदामिनी ने सोचा था कि उस जगह जो तपस्या कर रहा था, वह बूढ़ा ही होगा। पर जब उसने उसको जवान पाया तो वह शरमाई। उसने कहा—"मैं वज्रगिरि की राजकुमारी हूँ। कृपया मुझे मेरे पिता के घर ले जाइए।"

राजा ने उससे कोई प्रश्न भी न पूछा। उसने आखिर उससे उसका नाम भी न पूछा। वह तुरत यात्रा के लिए तैयार हो गया। अपने घोड़े पर ही उसको सवार करके अगले दिन शाम तक वज्रगिरि ले गया।

वज्रगिरि का राजा अपनी लड़की के मिलने पर बड़ा खुश हुआ। उसने वर्धमान का नाम सुनते ही कहा—"सुना है, आपको, आपके सेनापति ने धोखा दिया था। लड़की ने बताया है कि आप जंगल में रह रहे हैं। आपकी इतनी बुरी हालत क्यों? क्या मदद करके हम आपका राज्य वापिस नहीं दिला सकते?"

वर्धमान ने कहा—"मुझे राज्य की कभी फिक्र न थी, न मेरी प्रजा का ही मुझसे कोई वास्ता है। बिना प्रजा की सहमति के सेनापति ने कुछ न किया होगा। मेरी प्राण से प्यारी पत्नी भी मार दी गई। अब कोई चीज़ मेरे लिए संसार में नहीं रह गई है, जिसे मैं चाहता हूँ।"

"आपका यह सोचना ग़लत है कि आपका इस संसार में कोई नहीं है। सुना है कि एक व्यक्ति ने सौदामिनी को आपका आश्रय पाने के लिए कहा। हमारी लड़की कह रही थी कि उसको आप पर बड़ी भक्ति है। यही नहीं, हमारी सौदामिनी ही आपको बड़े आदर से देखती है। उसकी मदद माँगना था कि आप बिना कुछ पूछे तुरत उसके साथ चले आये। इस तरह के लोग सचमुच संसार में नहीं होते। अभी आपकी उम्र पचीस वर्ष की भी नहीं है.... और यह वैराग्य क्या है। यह अच्छा नहीं जंचता। जो हुआ सो हुआ। आप हमारी सौदामिनी से विवाह करके, हमारे छोटे राज्य पर राज कीजिए। आपने जो हमारा उपकार किया है, उसका हम यही प्रत्युपकार कर सकते हैं।" वज्रगिरि राजा ने कहा।

वज्रगिरि राजा की उदारता से वर्धमान का मन ज़रा बदला। उसने थोड़ा समय माँगा। आखिर, वह सौदामिनी के प्रेम पाश में पड़ ही गया और उसने उससे विवाह कर लिया।

उधर मंजरी, तब तक छुपी छुपी देखती रही, जब तक उसका पति, सौदामिनी को घोड़े पर सवार करके चला न गया। फिर वह भी अपने देश वापिस चली गई। नीली मणि की सहायता से रात भर घूमती वहाँ के उसने सारे हालात पूरी तरह जान लिये। सेनापति प्रजा का उद्धार करने के लिए राजा नहीं हुआ था। वह राजवैभव का मज़ा लूटता, लोगों पर इधर उधर के अत्याचार कर रहा था।

यह जानकर मंजरी, मंत्री और उच्च अधिकारियों के पास गई। उसने अपना परिचय दिया और बताया कि उसका पति वज्रगिरि में था। तुरत मन्त्री ने वज्रगिरि एक दूत भेजा और यह व्यवस्था कर दी कि वर्धमान आधी रात के समय, थोड़ी सेना के साथ आकर राजमहल घेर ले।

सेनापति और उसके मुख्य साथी, खा पीकर मौज़ कर रहे थे कि सैनिकों ने उनको घेर लिया और उनको कैद कर लिया। अगले दिन वर्धमान सिंहासन पर आकर बैठा। पहिले तो लोग चकराये, फिर बड़े खुश हुए। बगावत के लिए सेनापति की सुनवाई हुई। सबको फाँसी की सज़ा दी गई। नगरवासियों ने तीन दिन तक खूब खुशियाँ मनाईं। जब लोगों को यह मालूम हुआ कि उनके राजा ने एक और शादी कर ली थी और वह गर्भवती भी थी, तो उनकी खुशी का कोई ठिकाना न रहा।

उसके बाद वर्धमान राजकाज में दिलचस्पी दिखाने लगा। दोनों रानियों के साथ आराम से रहता, वह दोनों देशों का राजा होकर आराम से रहने लगा।

मधु पक्षी

अफ्रीका के पर्वत प्रान्त में जंगल में दो भाई रहा करते थे। वे दोनों जंगल में शिकार करके, अपने परिवार का पालन पोषण किया करते थे। एक दिन वे दोनों भाई, एक चमड़े की थैली कन्धे पर डाल, धनुष बाण लेकर अपने घर से निकले। वे कुछ दूर तक तो रास्ते पर चलते रहे, फिर उन्होंने घने जंगल में पैर रखा।

कुछ दूर जाने के बाद, उन्होंने एक जगह घड़ों को उल्टा रखा पाया।

"यह क्या? यहाँ इनको कौन रख गया है?" छोटे भाई ने पूछा।

"उनके पास मत जाओ। न मालूम उसमें क्या हो? हम क्यों बला अपने सिर पर मोल लें।" बड़ें भाई ने कहा। वह ज़रा डरपोक था। परन्तु छोटा भाई साहसी था। उसने कहा—"मालूम करना होगा, इसके नीचे है क्या?"

ज्यों ज्यों छोटा भाई, एक एक घड़े को उठाता जाता था, त्यों त्यों बड़ा भाई दूर भागता जाता था। पर जब उसने आखिरी घड़ा उठाकर देखा, तो उसके नीचे से, एक नाटी बूढ़ी बाहर कूदी।

उसने, उसको छुटकारा दिलानेवाले छोटे भाई की ओर देखा भी नहीं। परन्तु दूर खड़े बड़े भाई को देखकर पूछा—"क्यों, यूँ खड़े डर के मारे काँप रहे हो? मैं तुम्हारा कुछ नहीं बिगाड़ूँगी। अगर मेरे साथ आये, तो एक गजब की बात दिखाऊँगी।"

परन्तु बड़ा भाई डर के मारे इस कदर घबरा गया था कि वह हिला तक न।

तृप्ति चौधरी

"डरपोक कहीं का।" उसने उसको डाँटा और छोटे भाई को अपने साथ बुलाया। वह, उसके साथ चल भी दिया। कुछ दूर जाने के बाद, बुढ़िया ने रुककर छोटे भाई के हाथ में एक कुल्हाड़ी दी और उससे कहा—"मुझे एक पेड़ काटकर दो।"

उसने कुल्हाड़ी एक पेड़ के तने पर मारी ही थी कि उसमें से एक गौ निकली। इसी तरह हर चोट के साथ, बकरी या गौ या भेड़ या बैल तने में से निकले। जल्दी ही उसके चारों ओर पशुओं का एक झुन्ड तैयार हो गया।

"ये सब तुम्हारे हैं। तुम इनको अपने घर लेजाओ। मैं यहीं रह जाऊँगी।" बुढ़िया ने कहा।

छोटे भाई ने उसके प्रति अपनी कृतज्ञता व्यक्त की और उन पशुओं का हाँकता हाँकता अपने भाई के पास पहुँचा। "देखो, मुझे बुढ़िया ने क्या दिया है? जब उसने तुम्हें बुलाया था, तब तुम न आये।" छोटे भाई की बात सुनकर, बड़े भाई ने कुछ न कहा। दोनों पशुओं को लेकर अपने गाँव की ओर निकले।

गरमियों के दिन थे। धूप पड़ रही थी। दोनों भाइयों को प्यास लग रही थी। पशु भी हरी घास के लिए, जीभ लटकाये चले आ रहे थे। चिल्ला रहे थे।

थोड़ी दूर जाने के बाद छोटा भाई चिल्लाया—"देखो पानी।" उसके रास्ते के पास ही एक खड्ड था। उसमें, पेड़ों के बीच में एक नाला कल कल करता बह रहा था। परन्तु वहाँ उतरने के लिए कोई रास्ता न था। पहाड़ खड़ा था।

"क्या मुझे रस्सी में बाँधकर उतार दोगे? प्यास बुझाकर फिर ऊपर चला आऊँगा।" बड़े भाई ने छोटे भाई से पूछा।

छोटे भाई ने वही किया। बड़ा भाई खड्ड में उतर गया। पेट-भर ठंडा पानी पीकर, प्यास बुझाकर वह फिर ऊपर चला आया।

"मुझे भी उतारो, मैं भी प्यास बुझाकर चला आऊँगा।" छोटे भाई ने कहा।

बड़े भाई ने रस्सी के द्वारा छोटे भाई को खड्ड में उतारा। पशुओं को देखकर, उसको लालच हुआ। उसने अपने हाथ की रस्सी खड्ड में फेंक दी। भाई को उस खड्ड में मरने के लिए छोड़ दिया। पशुओं को लेकर वह घर गया।

उसने अपने माँ बाप के पास जाकर कहा—"एक बुढ़िया ने मुझे ये सब पशु दिये हैं।"

"हाँ, तो यह बात है! पर भाई कहाँ है?" पिता ने पूछा।

"क्या अभी तक वह घर नहीं आया है! वह दुपहर को ही घर चला आया था न!" बड़े भाई ने कहा।

उस दिन छोटा भाई घर नहीं आया। बड़ों ने भी यह सोचकर कि कहीं वह शिकार के लिए गया होगा, उसकी फिक्र न की।

अगले दिन अन्धेरे में, स्त्रियों को, गाँव के कुँये से पानी खींचते समय, मधु पक्षी की आवाज़ सुनायी दी। उस प्रान्त में लोग, जब मधु पक्षी की आवाज़ सुनते हैं, तो उसके पीछे चलने लगते हैं। क्योंकि वे उड़ते उड़ते, शहद के छत्तों के पास पहुँचते हैं। आदमी उन छत्तों को तोड़कर शहद ले आते हैं। इसलिए वे स्त्रियाँ जल्दी घर गईं। उन्होंने अपने आदमियों से कहा—"जल्दी आओ। मधु पक्षी चह चहा रहे हैं।"

भाइयों का पिता और कुछ गाँव के लोग, मधु पक्षियों के पीछे चले। वे उनको

बहुत दूर तक ले गये। प्राय: मधु पक्षी की आवाज़ छत्तों के आसपास ही सुनायी पड़ती है। परन्तु यह बहुत दूर जाने पर भी नहीं रुक रहा था। इसलिए बहुत-से लोग घर की ओर वापिस चल पड़े। परन्तु भाइयों के पिता और कुछ लोगों ने, कुछ दूर और आगे जाकर देखने की सोची।

मधु पक्षी जाता जाता यकायक खड्ड में उतर गया। अगर वहाँ छत्ता भी हो, तो भी बेकार था। इसलिए उसके पीछे आनेवाले निराश हो गये।

भाइयों के पिता ने खड्ड में झुककर झाँका। उसे मधु पक्षी तो नहीं दिखाई दिया, पर मनुष्य का पता लग गया। धीमे धीमे उसकी आवाज़ भी सुनाई पड़ रही थी।

"मेरा लड़का वहीं है। इस खड्ड में है।" पिता ज़ोर से चिल्लाया।

चार पाँच ने मिलकर खड्ड में रस्सी उतारी और उसको ऊपर खींच लिया।

छोटे भाई की बात सुनकर पिता बड़ा रोया धोया। "मैंने कभी न सोचा था कि बड़ा भाई इस तरह का कमीना काम करेगा? तुम्हें उसने इतना धोखा दिया? इस मधु पक्षी के कारण तुम बच गये, नहीं तो न मालूम तुम्हारी क्या गति होती?" उसने पूछा।

"उस बड़े को जीते जी, चीर फाड़ देना चाहिए।" और लोगों ने कहा।

न मालूम बड़ा भाई कैसे जान गया कि छोटा भाई खड्ड से निकल आया था। अपने पिता और भाई के गाँव पहुँचने से पहिले ही वह गाँव छोड़कर भाग गया। फिर उसका पता कहीं न लगा।

गुणशर्मा की कथा

उज्जयिनी में आदित्यशर्मा नाम का एक ब्राह्मण युवक रहा करता था। उसने एक सन्यासी से स्नेह किया। उस सन्यासी के पास एक यक्षिणी थी। आदित्यशर्मा ने उस यक्षिणी से मालूम कर लिया कि यक्षिणियों में सुलोचना सबसे अधिक उत्कृष्ट थी। फिर वह दक्षिण देश गया। विष्णुगुप्त नाम के सन्यासी द्वारा, उसने सुलोचना मन्त्र विधि सीखी। संपूर्ण होम करके, उसने सुलोचना प्राप्त की। सुलोचना ने कहा कि यदि आदित्यशर्मा ने वचन दिया कि उसके साथ रहते, वह छः मास तक ब्रह्मचर्य पालन करेगा, तो वह एक सर्वज्ञ लड़के को जन्म देगी। फिर वह उसको विमान में अलकापुर ले गयी। आदित्यशर्मा ने जब छः मास तक ब्रह्मचर्य का अवलम्बन किया, तो कुबेर यह देख प्रसन्न हुआ और उसने उसका सुलोचना के साथ देवता विवाह कर दिया। फिर उनके गुणशर्मा नाम का लड़का हुआ।

कुछ समय बाद, कुबेर के पास देवेन्द्र आया। सब देवेन्द्र को देखते ही खड़े हो गये। आदित्यशर्मा अन्यमनस्क था। वह न खड़ा हुआ। यह देख इन्द्र ने कहा—"तुम इस लोक में रहने लायक नहीं हो, मानव लोक चले जाओ। सुलोचना ने इन्द्र से प्रार्थना की कि ऐसा दण्ड उसके पति को न दिया जाये। "मेरी बात व्यर्थ नहीं जाती, अगर वह न जायेगा, तो उसका लड़का जाकर रहेगा।" और क्या किया जा सकता था, आदित्यशर्मा अपने लड़के गुणशर्मा को अपने मामा के घर छोड़

स्वयं अलका नगर वापिस चला गया। गुणशर्मा की उज्जयिनी के राजा महासेन से मैत्री हो गयी। गुणशर्मा में दिव्य गुण थे। सकल विद्या पारंगत था। बड़ा सुन्दर था। इसलिए राजा उसको बहुत चाहता था। राजा और उसकी पत्नी अशोकवती के मनोरंजन के लिए, गुणशर्मा नृत्य किया करता। वीणा बजाया करता।

धीमे धीमे अशोकवती, गुणशर्मा पर मुग्ध हो गयी। वह अपने पति की आज्ञा लेकर, गुणशर्मा से वीणा सीखने लगी। एक बार रानी ने अपने मन की इच्छा

व्यक्त की। गुणशर्मा ने उसका मन बदलने का प्रयत्न किया। रानी ने कहा कि यदि उसने उसकी इच्छा पूरी न की, तो वह उसको मारकर स्वयं मर जायेगी। गुणशर्मा ने तब उससे कहा कि वह जल्दबाज़ी न करे, ज़रूर वह उसकी इच्छा पूरी करेगा, इस तरह झूटा वचन देकर उसने अपने को बचा लिया।

कुछ दिनों बाद, महासेन ने सोमक नामक शत्रु से युद्ध करना प्रारम्भ किया। यही मौका देखकर, गौड़ राजा विक्रमशक्ति नामक एक और शत्रु ने महासेन पर आक्रमण किया। दोनों शत्रुओं के बीच फंसे अपने राजा की मदद करने के लिए गुणशर्मा अन्तर्धान विद्या द्वारा, आधी रात के समय, विक्रमशक्ति के शिबिर में गया। "राजा, मैं विष्णु दूत हूँ। चूँकि तुम विष्णु भक्त हो, इसलिए उस परमात्मा ने तुम्हें सलाह देने के लिए मुझे भेजा है। यदि तुम तुरत महासेन से सन्धि करके वापिस न चले गये, तो तुम पर और तुम्हारी सेना पर घोर आपत्ति आनेवाली है।"

विक्रमशक्ति ने इस विष्णु दूत का विश्वास किया। महासेन से सन्धि करके

वह अपनी सेना के साथ वापिस चला गया। महासेन ने सोमक को हरा दिया, इसके कुछ दिन बाद, महासेन का विक्रमशक्ति के साथ भयंकर द्वन्द्व युद्ध हुआ और महासेन पैर फिसल कर गिर गया। विक्रमशक्ति ने उसको मारने के लिए तलवार उठायी। तुरत गुणशर्मा ने चक्र का प्रयोग किया और विक्रमशक्ति के उठे हाथ को काटकर उसे मार दिया। फिर उसका राज्य भी महासेन के हाथ में आ गया।

महासेन के साथ गुणशर्मा फिर उज्जयिनी वापिस आया, तो अशोकवती फिर उसको तंग करने लगी। परन्तु गुणशर्मा विचलित न हुआ। आखिर अशोकवती क्रुद्ध हो उठी। उसने राजा से कह दिया कि वह उसके साथ बलत्कार करना चाहता था। राजा ने उसकी बात पर विश्वास करके, गुणशर्मा को मारने का निश्चय किया। परन्तु उसमें यह खुले तौर पर करने की हिम्मत न थी। सब जानते थे कि उसने कई बार राजा के प्राणों की रक्षा की थी। यह भी पता लगने देना कि गुणशर्मा ने उसकी पत्नी के साथ बलत्कार करने की चेष्टा की थी, उसकी प्रतिष्ठा के प्रतिकूल था।

मुझे धोखा देकर, विक्रमशक्ति से पैसा ऐंठने के लिए, हम दोनों में समझौता करने की कोशिश की। यह सोचकर कि पैसा क्यों खराब किया जाये, उसने रसोइये से मुझे विष दिलाने की कोशिश की। गुणशर्मा बड़ा राजद्रोही है।"

राजा ने उसको मारने की कोशिश की। गुणशर्मा बचकर अपनी ओर आते हुए सैनिकों को मारता, अन्तर्धान विद्या का उपयोग करके अदृश्य होकर सब की आँखों में धूल झोंककर उज्जयिनी से वह दक्षिण देश की ओर निकल पड़ा।

इसलिए महासेन ने उसे चालाकी से मरवाने की सोची। एक दिन भरे दरबार में राजा ने कहा—"यह सोचकर कि इस गुणशर्मा से कोई अधिक निकट मेरा मित्र नहीं है, मैंने इसको सिर चढ़ाया। एक बार मेरे शत्रु विक्रमशक्ति ने अपना एक भेदिया, मेरे यहाँ रसोइया बनाकर भेजा और उससे मुझे विष दिलाने की सोची। तब इस गुणशर्मा ने मुझे वह विष न खाने दिया और यूँ दिखाया, जैसे मेरी जान की रक्षा की हो। वह सब एक नाटक मात्र था। इस गुणशर्मा ने

एक गाँव में एक बढ़ के पेड़ के नीचे, अग्निदत्त नाम का ब्राह्मण अपने शिष्यों से अध्ययन करवा रहा था। गुणशर्मा वहाँ गया। वहाँ उसने उस ब्राह्मण को नमस्कार किया। अग्निदत्त ने गुणशर्मा द्वारा उसकी और उसके पिता की कहानी सुनी। फिर कहा। यह ग्राम मेरा ही है। हमारे घर आओ। तुम वहाँ सुख से रहो।

अग्निदत्त का घर काफी बड़ा था। उसके पास बहुत सी गाय भैंसे थीं। धन सम्पत्ति के अतिरिक्त, उसकी सुन्दरी नाम की एक सुन्दर लड़की भी थी। ब्राह्मण को लगा

कि गुणशर्मा सुन्दरी से विवाह कर लेगा। इस बहाने से कि गुणशर्मा उसका ज्योतिष देख सकेगा, उसने सुन्दरी को उसे दिखलाया।

"इसके नाक पर और वक्ष पर तिल हैं, इसकी सपत्नियाँ होंगी।" गुणशर्मा ने कहा।

"यह तो कोई अशुभ नहीं है। यदि सपत्नियाँ हैं, तो इसका मतलब है कि कोई सम्पन्न ही इसके साथ विवाह करेगा।" अग्निदत्त ने कहा।

कुछ दिनों बाद अग्निदत्त ने गुणशर्मा से कहा—"बेटा, हमारी सुन्दरी से विवाह करके यहीं रह जाओ। क्यों, कोई और देश जाते हो?"

"इससे और अच्छी बात कौन-सी हो सकती है? परन्तु उज्जयिनी के राजा ने जो मेरे साथ अन्याय किया है उसके बारे में मैं कितना चिन्तित हूँ, आप नहीं जानते।"

"तुम इतने बड़े पंडित हो? क्या बातें कर रहे हो? मूर्ख का किया हुआ अपमान क्या तुम जैसे पवित्र को छुयेगा? या तुम्हें यह सन्देह है कि सभी स्त्रियाँ अशोकवती जैसी ही होती हैं?" अग्निदत्त ने पूछा।
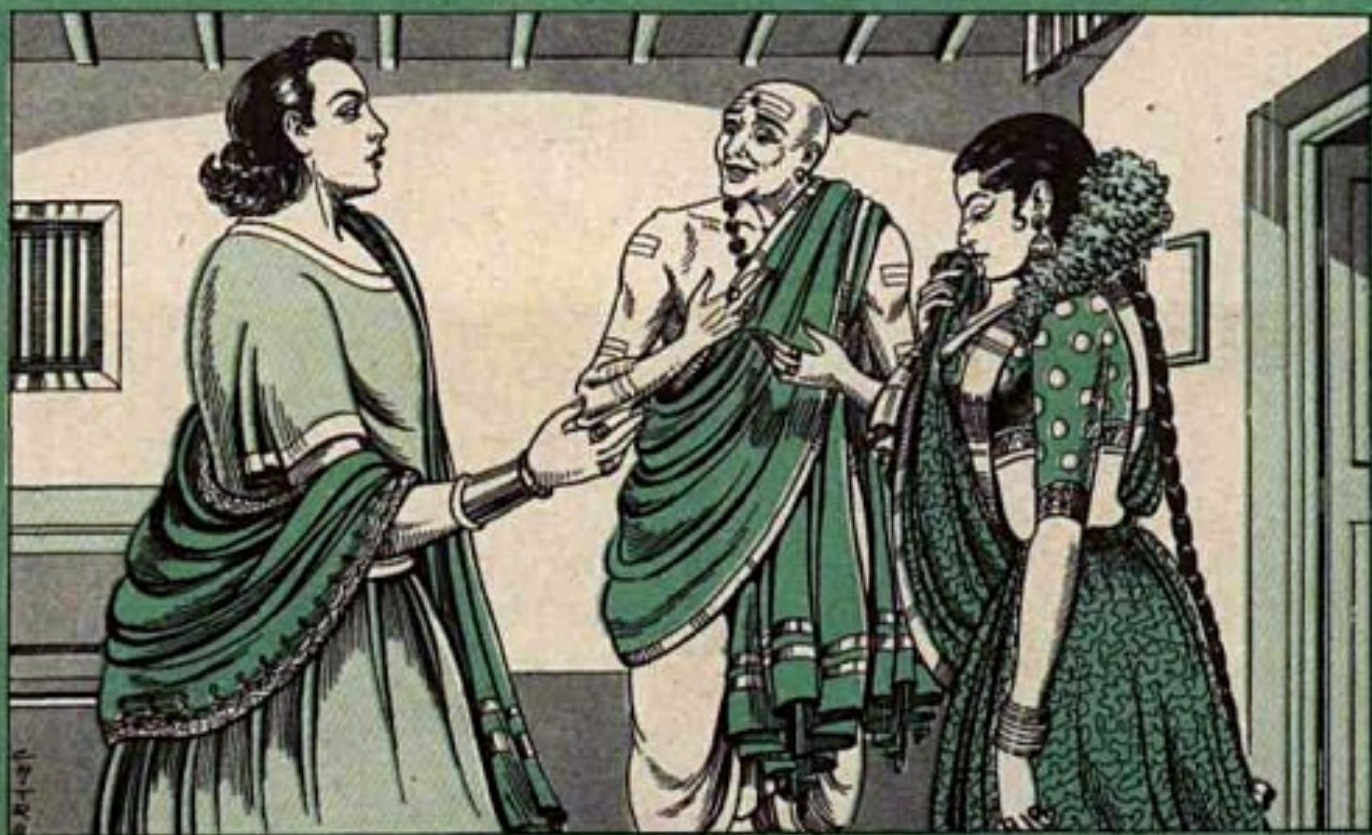
"उज्जयिनी यहाँ से पास ही है। वहाँ का राजा, फिर मुझे नष्ट पहुँचा सकता है। मैं तीर्थयात्रा करता अपना जीवन समाप्त कर लूँगा।" गुणशर्मा ने कहा।

"शास्त्रों के अनुसार अग्नि कार्य और पितृ कार्य जो नहीं कर सकते हैं वे ही तीर्थ यात्रा कर सकते हैं। तुम्हारे लिए सुन्दर पाताल गृह बनवाऊँगा। मेरी लड़की से विवाह करके, बिना किसी मनुष्य की नज़र में पड़े वहाँ सुख से रहो।" अग्निदत्त ने कहा।

"क्या कोई ऐसा भी है, जो सुन्दरी से विवाह न करना चाहे? पर अभी विवाह नहीं होगा। मैं भगवान की आराधना करूँगा और जब तक वह कृतघ्न महासेन प्रायश्चित्त नहीं कर लेता, तब तक विवाह नहीं करूँगा।" गुणशर्मा ने कहा।

अग्निदत्त ने उसके लिए एक सुन्दर पाताल गृह बनाया। उसमें उसने गुणशर्मा को भेजा। अपने गुरु द्वारा बताये गये कुमार मन्त्र उसको बताया और उससे भगवान की आराधना करने के लिए कहा। गुणशर्मा ने सुन्दरी की सेवायें प्राप्त करते, कुमार मन्त्र जपते, कुमारस्वामी का दर्शन प्राप्त किया और अक्षय धनकोश प्राप्त किया। फिर उसने सुन्दरी से विवाह कर लिया। सेना जमा की और सेना को लेकर उसने उज्जयिनी पर आक्रमण किया। महासेना को पराजित किया अशोकवती की दुष्टता को प्रकट किया। और स्वयं उज्जयिनी का राजा बन गया। उसने अनेक राजकुमारियों से विवाह किया और सम्राट बनकर सुख से रहने लगा।
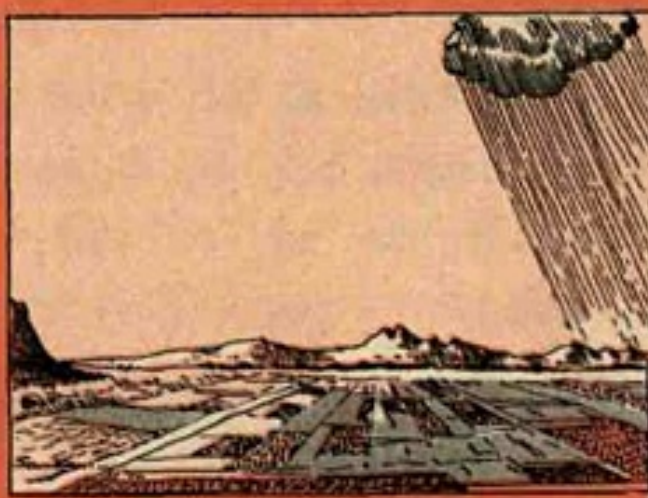
छोटा मेघ

त्रिगर्त देश में सभी कर्षक थे। वह देश अच्छी फसलों के कारण हमेशा समृद्ध रहता। वहाँ की जनता का सुख सन्तोष पूरी तरह वर्षा देनेवाले, वरुण देवता और मेघों पर निर्भर था।

फिर भी त्रिगर्त के लोग और कितने ही देवी, देवताओं की आराधना करते, पर न वरुण की पूजा करते, न मेघों की ही। कम से कम मेघों की ओर हाथ जोड़कर अपनी कृतज्ञता भी न दिखाते। यह देख मेघों को क्रोध आ गया। मेघों ने दूर कहीं अपना सम्मेलन किया और निश्चय किया कि त्रिगर्त देश में वे एक बून्द भी न बरसेंगे।

इस कारण त्रिगर्त देश में उस साल वर्षा ऋतु तो आयी, पर वर्षा न हुई। वहाँ के लोग लगातार आकाश की ओर देखते रहे। पर कहीं उनको एक छोटा-सा बादल भी न दिखाई दिया। प्रजा हाहाकार करने लगी। मेघ उनके हाहाकार सुनकर बड़े सन्तुष्ट हुए।

परन्तु अचानक उनके सन्तोष में बाधा आयी। एक छोटा मेघ बिना किसी से कहे सुने, त्रिगर्त देश के ऊपर गया और वहाँ बरस आया।

"वाह....बारिश आ गई।" यह सोच त्रिगर्त के लोगों ने बीज निकाले और उनको खेतों में बो दिया।

इस बीच बड़े मेघों ने छोटे मेघ को बड़ा डाँटा फटकारा। "क्या मतलब है? हम सबने यह निश्चय कर रखा था कि त्रिगर्त को एक बून्द भी न देंगे, सतायेंगे

और तुम वहाँ बिना किसी से कहे बरस आये? क्यों?"

"लगता है, तुम्हारी अक्ल मारी गई है। मैंने एक बौछार से उनके वे बीज भी, जिन्हें उन्होंने बचा रखे थे, भूमि पर बिखरवा दिये। शायद तुम यह नहीं समझ पा रहे हो।" छोटे मेघ ने बड़े मेघों से कहा।

बड़े मेघ यह देखने आये कि त्रिगर्त देश के लोगों की क्या हालत थी? लोगों में हाय तोबा मची हुई थी। एक बौछार के होने से उन्होंने सोचा कि बारिश शुरु हो गई थी और रहे सहे बीज खेतों में डाल दिये। उसके बाद एक बून्द भी न बरसा। वे मेघों की ओर मुख करके वरुण देवता की निरन्तर पूजा कर रहे थे।

उनको देखकर बड़े मेघों को बड़ी दया आयी। उन्होंने छोटे मेघ से कहा—"बड़ों से बिना कहे, कभी ऐसे काम न किया करो।" फिर वे त्रिगर्त देश में खूब बरसे और बरसकर अपने रास्ते चले गये।

चूँकि उनकी प्रार्थना सुनकर वरुण ने वर्षा की थी, इसलिए त्रिगर्त के लोग उसकी पूजा करने लगे। उसके बाद कभी वहाँ अनावृष्टि न हुई। वह शस्यश्यामल प्रदेश ही रहा।

बड़े मेघ न जानते थे कि इस सब का कारण छोटा मेघ ही था। उसने जो बिना सोचे किया था, उससे अन्त में अच्छा ही हुआ। चूँकि उसने बड़े मेघों से डाँट खायी थी, इसलिए उसको भी न पत था कि उसने बड़ा काम किया था।
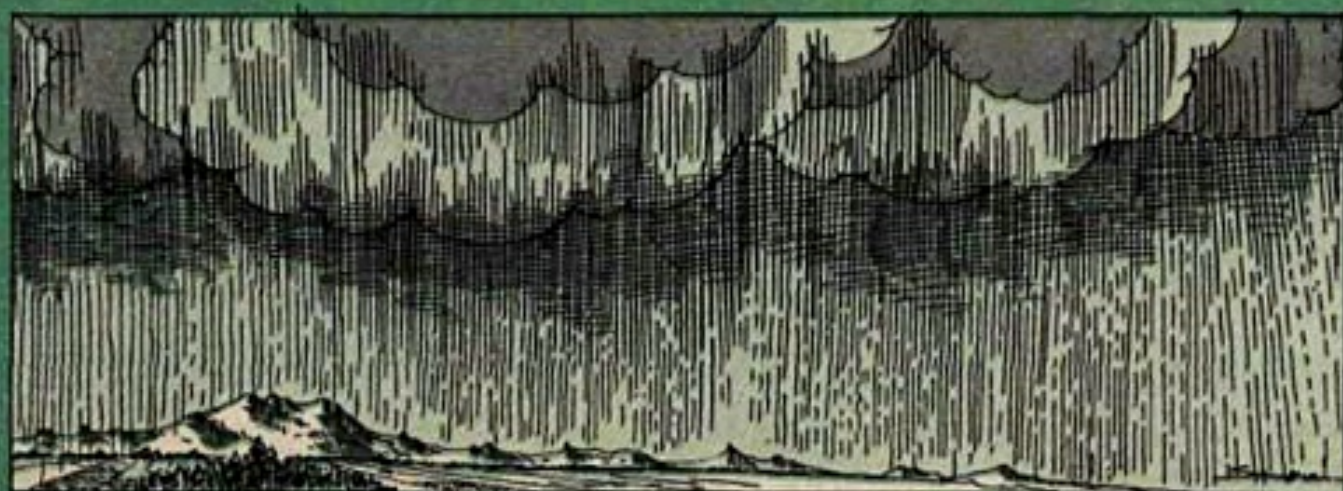
मेले के मज़े

पहाड़ पर होनेवाले मेले में पन्नालाल सपरिवार गया। यूँ तो वह छोटा मोटा सुनसान गाँव था, पर मेले के दिनों में वहाँ लोग जमा होते। पौधे लगाये जाते, दुकानें लगतीं। कितने ही और तमाशे होते। पन्नालाल उस मेले में गया। वह एक धर्मशाला में ठहरा। प्रातःकाल नित्यकृत्यों से निवृत्त होकर पहाड़ के पास के नाले के पास गया। वह स्नान करके वापिस आ रहा था, तो एक बूढ़े ने कहा—"अब मैं नहीं चल सकता, बाप रे बाप।" कहकर वह गाड़ी के नीचे सो गया। वह बूढ़ा पन्नालाल की जान पहिचान का था।

पन्नालाल पास गया, तो बूढ़े ने कहा—"पन्नालाल, तुम भगवान की तरह आये हो, एक छोटा-सा उपकार करते जाओ। इस डब्बे में रुपयों की गाँठ है। उसे भगवान की हुँडी में डाल देना। जैसे तैसे इतनी दूर तो चला आया हूँ। पर इससे आगे नहीं जा सकता, यहीं रहूँगा, ज़रा भगवान का प्रसाद ले आना।"

पन्नालाल उसका दिया हुआ डब्बा लेकर पगडंडी पर चला गया। रात में उसे एक तीन वर्ष की लड़की दिखाई दी। वह लड़की "माँ...." चिलाती, रोती, गिरती मेले की ओर जा रही थी।

पन्नालाल ने उस लड़की को उठाकर पूछा—"तुम्हारा नाम क्या है? तुम्हारे लोग कहाँ है?" उसने चारों ओर देखा। कोई आस पास नहीं दिखाई दिया। लड़की ने अपनी टूटी फूटी बोली में बताया कि उसका नाम मालती था और कोई

"मैं लड़की को झूले में झुलाने के लिए जाते जाते यहाँ एक डब्बा रख गया था। मालूम है, वह कहाँ गया है?" पन्नालाल ने वहाँ खड़े लोगों से पूछा।

"कोई आदमी जब झूला रुका तो उसमें से उतरा और जाता जाता डब्बा भी ले गया। हमने सोचा कि शायद डब्बा उसी का था।" वहाँ के लोगों ने कहा। उन्होंने उस आदमी के हुलिया के बारे में भी बताया। उसने लाल पगड़ी पहिन रखी थी, हरा कुड़ता था उसका और दाढ़ी मूँछें भी थीं।

चोर उनकी चीज़ें उठा ले गया था। वह माँ के लिए चिल्लाती जाती थी। वह किसी रईस की लड़की जान पड़ती थी।

पन्नालाल, मालती को मेले के पास ले गया। उसने इधर उधर बहुत खोजा कि कहीं उस लड़की के लोग मिलें। लड़की को एक केला भी खरीदकर दिया। जब लड़की ने झूले में झूलना चाहा, तो उसे झुलाया भी। फिर लड़की को उठाकर जब उसने बूढ़े के डिब्बे को उठाना चाहा तो वह वहाँ न था।

पन्नालाल जिस तरह मालती के माँ-बाप को खोज रहा था, उसी तरह हरे कुड़तेवाले, लाल पगड़ीवाले, दाढ़ी मूँछवाले आदमी के लिए भी खोजने लगा।

इतने में "मालती" चिल्लाती एक स्त्री उसके पास आई। उसने मालती को उसके हाथ से छीन लिया।

"क्या यह लड़की आपकी है? जाने कब से मैं आपको खोजता फिर रहा हूँ।" पन्नालाल ने कहा।

उस स्त्री ने लड़की का शरीर सहलाकर गुस्से में पन्नालाल से कहा—"अरे लड़की

के सब गहने चुराकर उसे वापिस दे रहे हो!" पन्नालाल ने, उस स्त्री को कृतज्ञता दिखाना तो अलग, चोरी थोपता देख, बता दिया, कैसे वह लड़की उसे मिली थी। मालती ने भी उसकी बात का समर्थन किया। वह माँ भी यह तसल्ली करके कि गहने गये तो गये, लड़की मिल गई थी, यही काफी था। लड़की को लेकर चली गई।

अब पन्नालाल को बूढ़े के दिये हुए डिब्बे के बारे में फिक्र सताने लगी। वह उसकी नाले के पास इन्तज़ार कर रहा होगा। पन्नालाल को न सूझा कि क्या किया जाये। वह इसी सोच में अपनी सराय गया। उसको देखते ही उसकी पत्नी ने पूछा—"क्या अपना लड़का कहीं दिखाई दिया! जब आप काफी देर तक न आये तो मैंने सोचा कि दोनों मिलकर कहीं घूम फिर रहे होंगे।"

"अरे भीड़ में कहीं घूम फिर रहा होगा, वहीं आ जायेगा।" पन्नालाल ने खिझते हुए कहा।

"जी नहीं, तड़के, थोड़ा-सा खाकर भी न गया। और अब भोजन का समय हो

गया है। ज़रा, लड़के को ढूँढ़ लाइये न।" पत्नी ने कहा।

"अभी तक मैं भीड़ में उलझा हुआ था। एक चोर के कारण मुझपर अच्छी आफ़त आ पड़ी है। कितनी देर और देखूँ, देखते देखते तंग आ गया हूँ।" पन्नालाल ने कहा।

इतने में दस वर्ष का पन्नालाल का लड़का हाँफता हाँफता आया। "पिताजी, जानते हो क्या हुआ!" उसके हाथ में, एक चाकू, दाढ़ी और एक डब्बा था। उस डब्बे को देखते ही पन्नालाल की

जान में जान आई। वह बूढ़े का दिया हुआ डब्बा ही था।

पन्नालाल के लड़के ने जो कुछ हुआ था अपने माँ बाप को कह सुनाया। वह जब सवेरे, सराय के आसपास के पेड़ों पर बन्दरों को उछलता कूदता देख, खुश हो रहा था कि लाल पगड़ीवाले, हरे कुड़तेवाले, दाढ़ी मूँछवाले एक आदमी ने कहा—"अरे, खाओगे!" उसने हाथ में चने दिखाये। पन्नालाल का लड़का पास गया, तो उस आदमी ने उसका हाथ ज़ोर से पकड़ लिया। दूसरे हाथ से चाकू दिखाते हुए कहा—"चिल्लाओगे, तो भोंक दूँगा। मेरे साथ आओ।" कहकर, वह उसको पत्थरों में ले गया।

वहाँ उस आदमी ने अपने हाथ का चाकू, पत्थर पर रखा और वह लड़के के कानों की बालियाँ निकालने लगा। एक बाली तो निकल आई। पर दूसरी नहीं निकली। इस बीच लड़के को लगा, जैसे उसकी दाढ़ी नकली हो। उसने हाथ फैलाकर, चाकू ले लिया और उस आदमी की दाढ़ी खींचने लगा। दाढ़ी हाथ में आ गयी और घबराता उठ खड़ा हुआ।

"चोर, चोर...." लड़का चिल्लाया। दूर लोगों की बातें सुनाई पड़ने लगीं। चोर भागने लगा। पन्नालाल का लड़का डब्बा लेकर चोर के पीछे भागा। परन्तु चोर बड़े बड़े पत्थरों को लाँघता नाले की ओर भाग गया और पन्नालाल का लड़का सराय वापिस चला आया।

अपने लड़के का साहस और सूझ बूझ देखकर पन्नालाल बड़ा सन्तुष्ट हुआ। वे उसी समय पहाड़ पर गये और मन्दिर में उन्होंने भगवान का दर्शन किया। पन्नालाल ने बूढ़े के डिब्बे को हुंडी में डाल दिया।

जब पन्नालाल बूढ़े के पास जाने लगा, तो उसका लड़का भी उसके साथ गया। नाले के पास उन्होंने देखा कि बूढ़े के पास एक और आदमी लेटा हुआ था।

"बाबा, यह आदमी कौन है?" पन्नालाल ने बूढ़े को खाली डिब्बा देते हुए पूछा।

"नहीं मालूम कौन है, पैर में कुछ घुस गया है, चल नहीं पा रहा है, यहीं लेट गया है।" बूढ़े ने कहा।

यह सुन लेटा हुआ आदमी उठ खड़ा हुआ। पन्नालाल के लड़के को देखकर घबराने लगा। "पिता जी, यही चोर है।" पन्नालाल के लड़के ने कहा।

चोर ने भागने की सोची। पर पैर दर्द के कारण भाग न सका। पन्नालाल ने उसको आसानी से पकड़ लिया। जब उसकी उसने तलाशी ली तो उसके पास वह बाली भी मिल गई। पन्नालाल ने उस चोर को ग्रामाधिकारी को सौंप दिया, यात्रा समाप्त करके परिवार के साथ अपने गाँव वापिस चला गया।

न्यायपीठ

कुन्दनपुर का राजा चन्दन चाहता था कि न्याय का पूर्णतः पालन हो। प्रायः यह सम्भव न होता—चूँकि न्याय का निर्णय करनेवाले मनुष्य थे और वे गल्ती भी कर सकते थे। इसलिए न्याय में कसर रह ही जाती।

इस कसर को दूर करने के लिए, चन्दन राजा वन में गया और धर्म देवता की तपस्या करने लगा। धर्म देवता ने उसकी तपस्या की प्रशंसा की और पूछा कि वह क्या चाहता था। राजा ने कहा कि उसे एक न्याय पीठ दिया जाये, ऐसा न्याय पीठ कि यदि उस पर खड़े होकर, कोई झूट बोले, तो वह बदशक्ल हो जाये।

धर्म देवता राजा को वैसा न्याय पीठ देकर अन्तर्धान हो गया। राजा उसको बाजे गाजे के साथ ले आया। अपने दरबार में उसकी प्रतिष्ठा की और उसकी महिमा के बारे में सबको बताया। और जिस किसी ने उस पर खड़े होकर झूट बोला और वे बदशक्ल हो गये, तो औरों को उसकी महिमा के बारे में विश्वास हो गया। तब से राजा को यह ख्याति मिली कि उसके राज्य में, न्याय चारों पायों पर था। राजा बड़ा सन्तुष्ट था।

"अब मैं आँखें मूँदकर, ठीक ठीक न्याय कर सकता हूँ। जब तक मेरे पास न्यायपीठ है, मेरे राज्य में अन्याय नहीं हो सकता।" राजा ने अपने सामन्तों की सभा में शेखी मारी।

यह बात सुन मन्त्री ने ज़ोर से हँसकर कहा—"महाराज, न्यायपीठ के बारे में

राजेन्द्र

इतना अन्ध विश्वास होना अच्छा नहीं है। इसको ठग कर कोई अन्याय कर सकता है।"

राजा को गुस्सा आ गया। "न्याय का इस प्रकार अपमान करने से बड़ा कोई अनाचार न होगा। यदि तुमने तीन दिन में यह सिद्ध न किया कि उसको ठग कर अन्याय किया जा सकता है, तो तुम्हारा सिर कटवा दूँगा।" राजा ने मन्त्री से कहा।

कुन्दनपुर में हेमकुरन्गी नाम की एक सुन्दर वेश्या थी। वह इस अभिमान में कि उससे अधिक कोई सुन्दर न थी, सब का अपमान किया करती थी। मन्त्री ने उसको और राजा को एक साथ सबक सिखाने की ठानी।

उसने एक योगी का वेष धारण किया। हेमकुरन्गी के घर के सामने उसने धरना दिया और आते जाते लोगों से पैसा लेता, सोना लेता और उसका दुगना करके उनको भेज देता।

यह देखकर हेमकुरन्गी को भी लालच हुआ। रात के समय जब कोई नहीं देख रहा था, वह योगी के पास आई। उसने अपना सारा सोना, रत्न आदि देकर कहा कि वह उसे दुगना कर दे। योगी ने यह कहकर उसे भेज दिया कि कल सवेरे उसे दे देगा और उसने सोने आदि को अपने झोले में डाल लिया।

हेमकुरन्गी ने अपने आदमी यह देखने के लिए तैनात कर दिये कि रातों रात योगी कहीं रफ़ू चक्कर न हो जाये। वह सवेरे सवेरे आई और उसने योगी से पूछा कि वह उसकी चीज़ें दुगनी करके दें।

"तुम्हारी कोई चीज़ मेरे पास नहीं है।" योगी ने कहा।

हेमकुरन्गी को बड़ा गुस्सा आया और दुःख भी हुआ। यह सोचकर कि योगी है, मैंने सब कुछ दे दिया और यह मुझे ठगने की सोच रहा है। राजा से शिकायत करने के लिए उसने योगी को राजा के पास आने के लिए कहा। योगी ने भी इस पर कोई आपत्ति न की।

हेमकुरन्गी की शिकायत सुनकर, राजा ने योगी को न्यायपीठ पर खड़े होकर जबाब देने के लिए कहा। योगी ने अपने डण्डे को हेमकुरन्गी को देखकर न्यायपीठ पर खड़े होकर कहा—"इस हेमकुरन्गी की कानी कौड़ी भी मेरे पास नहीं है।" यह कहकर वह नीचे उतर आया। उसका कुछ भी न बिगड़ा।

इतना सफेद झूट सुनकर हेमकुरन्गी अपने को काबू में न रख सकी। उस डण्डे को हाथ में पकड़कर न्यायपीठ पर खड़े होकर ज़ोर से चिल्लायी—"मैंने अपना सोना और रत्न वगैरह इस योगी को दिये थे। पर इस चोर ने उन्हें मुझे वापिस ही न दिये।" अभी उसकी बात पूरी भी न हुई थी कि उसका रूप बदल गया, दरबार में उपस्थित सब लोग हँसे।

मन्त्री ने अपना वेष उतारकर राजा को जो कुछ गुजरा था, उसे बताया—"देखा, अपने न्यायपीठ ने हेमकुरन्गी के साथ किस प्रकार अन्याय किया है।"

हेमकुरन्गी ने जान बूझकर झूट न बोला था। वह न जानती थी कि उसके हाथ में जो डण्डा था उसमें ही उसकी चीजें छुपाई गई थीं। फिर भी वह बदशक्ल हो गई।

यह देख राजा न्यायपीठ से विरक्त हो गया और उसे न्यायस्थान से हटा दिया।

उत्तरकाण्ड
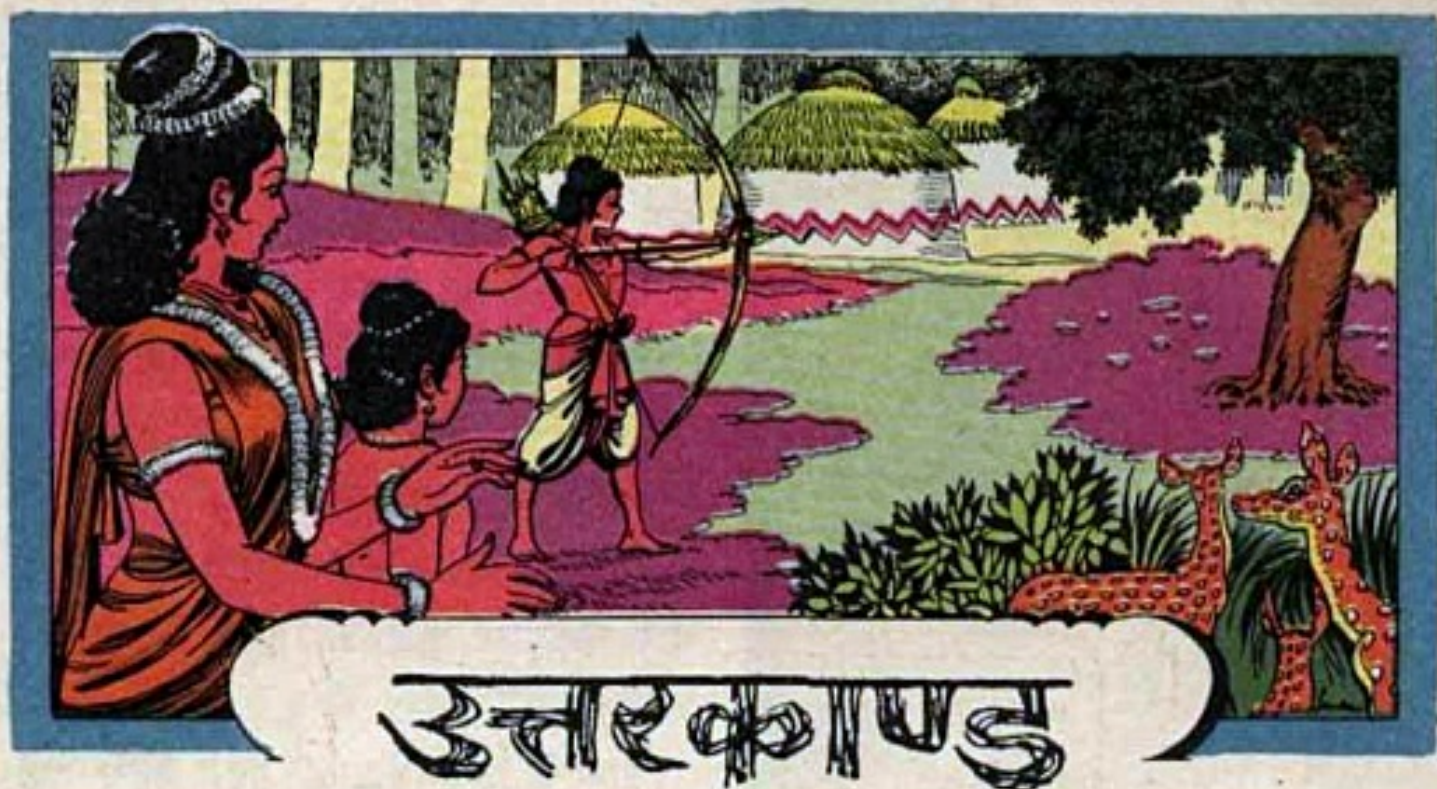
अगस्त्य ने राम को वाली सुग्रीव की कथा इस प्रकार सुनाई।

मेरु पर्वत का मध्य शिखर देवताओं के लिए भी पवित्र है। उसपर विशाल ब्रह्म सभा है। चतुर्मुख ब्रह्मा हमेशा वहीं रहता है।

एक बार जब ब्रह्मा योगाभ्यास कर रहा था, तो उसने आँख के पानी को हटाया, तो उसमें से एक वानर पैदा हुआ। ब्रह्मा ने उस वानर को कुछ समय तक, मेरु पर्वत के कन्द मूल, फल खाते रहने के लिए कहा। इसके बाद वानर दिन-भर पेड़ों पर घूमा करता और शाम को अच्छे फल और फूल लेकर ब्रह्मा के पास आया करता। इस प्रकार बहुत समय गुज़र गया। एक बार उस वानर को प्यास लगी। वह मेरु पर्वत के उत्तर शिखर पर गया। वहाँ एक जलाशय था, जिसमें बहुत-से पक्षी थे। वानर अपना शरीर झाड़कर, पानी के पास बैठा और उसे तब पानी में अपनी परिछाई दिखाई दी। यह सोच पानी में उसका कोई शत्रु था, वह उसकी खबर लेने पानी में कूदा। बहुत खोजा, जब उसे कोई न मिला, तो वह फिर किनारे पर चला आया। किनारे पर पहुँचते ही, वह वानर एक सुन्दर स्त्री बन गया। सुन्दर स्त्री बनकर,
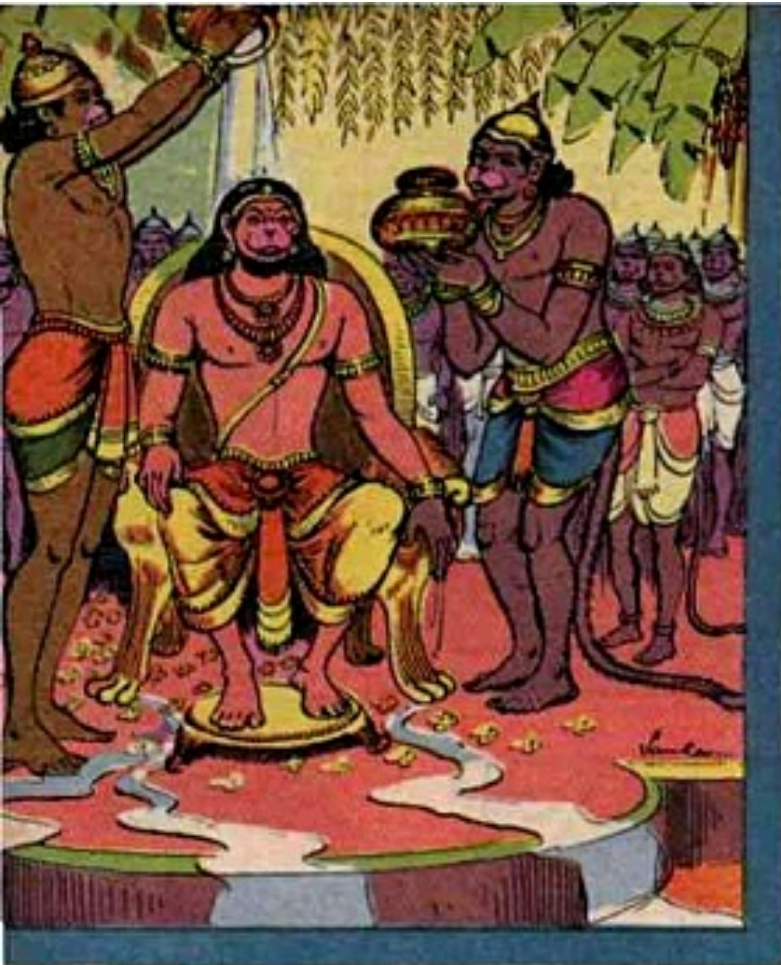
किया। उसी का नाम ऋक्षरचस था। ब्रह्मा की आज्ञा पर ऋक्षरचस, अपने दोनों लड़कों को लेकर, वानरों की नगरी किष्किन्धा चला गया। वहाँ उसने अपना राज्याभिषेक करवाया और वह सप्त द्वीपों के वानरों का राजा कहलाया।

"राम, वाली और सुग्रीव का पिता और माता भी ऋक्षरचस था।" कहकर, उसने कहानी समाप्त की।

राम के पट्टाभिषेक के बहुत दिनों तक अतिथियों का सुख से समय कटता रहा। फिर एक एक करके लोग जाने लगे। राजा ने सबके प्रति अपनी कृतज्ञता व्यक्त की और यथोचित उनका सत्कार करके, उनको भेज दिया। भरत के साथ महाराजा जनक और लक्ष्मण के साथ कैकेय महाराजा गये। भरत के निमन्त्रण पर आये काशी राजा प्रतर्धन आदि राजा अपने अपने देश चले गये।

राजा के साथ आये हुए वानर और राक्षस दो मास अयोध्या में आराम से रहकर, चले गये। राम ने उन वीरों का, सुग्रीव, अंगद और हनुमान आदि का, खूब सत्कार किया। उसी तरह विभीषण ने भी,

जब वह वहाँ बैठा था, तो ब्रह्मा के दर्शन करके, इन्द्र और सूर्य उस तरफ़ से गये। दोनों की नज़रें एक साथ उस पर पड़ीं। दोनों उस पर मुग्ध हो गये। वह उन दोनों द्वारा गर्भवती हुई और उसने वाली और सुग्रीव को जन्म दिया। इन्द्र ने अपने लड़के वाली को सोने के कमलों की माला उपहार में दी। सूर्य ने अपने लड़के सुग्रीव को हनुमान-सा मित्र दिया।

इसके बाद, उस वानर का स्त्री रूप जाता रहा और फिर यथापूर्व हो गया। उसने ही अपने दोनों लड़कों का पोषण

अपने राक्षसों का सम्मान किया। वे सब लंका और किष्किन्धा चले गये।

फिर राम, सीता के साथ वन विहार करते, मित्रों के साथ गप्प करते, समय बिताने लगे। सीता में गर्भ के चिह्न दिखाई देने लगे। राम ने उससे कहा—"सीता, तुम गर्भवती लगती हो, अगर तु कुछ चाहती वाहती हो, तो बताओ। तुम्हारी इच्छा पूरी कर दूँगा।"

सीता ने मुस्कराकर कहा—"मैं गंगा के तट पर ऋषियों के आश्रम देखकर वहाँ के कन्द मूल खाकर, वहाँ के पेड़ों के नीचे घूमना चाहती हूँ।"

राम ने कहा—"तो ऐसा ही करना। कल ही मैं तुम्हें वहाँ भिजवा दूँगा।"

सीता से यह कहकर, वे अपने मित्रों के बीच आये और हास्य कथायें कहने सुनने लगे। इतने में वहाँ भद्र को देखकर उन्होंने पूछा—"भद्र! मेरे बारे में, सीता के बारे में और मेरी माताओं के बारे में, भाइयों के बारे में लोग क्या सोच रहे हैं?"

भद्र ने हाथ जोड़कर कहा—"लोग तरह तरह की बातें कर रहे हैं। वे

अधिक रावण के संहार के बारे में ही बातें करते हैं।"

राम को सन्देह हुआ कि भद्र कुछ छुपाने का प्रयत्न कर रहा था। उन्होंने कहा—"भद्र, जो कुछ है बताओ, अच्छी बात हो या बुरी।"

"प्रजा आपकी बड़ी प्रशंसा कर रही है कि आपने समुद्र पर पुल बँधवाया। रावण को नष्ट कर दिया। पर रावण अपनी गोदी में बिठाकर सीता को ले गया था। वहाँ उनको काफ़ी समय तक रखा भी था। मगर फिर आप उसको

ले आये हैं, इसलिए लोग कह रहे हैं कि आपको अच्छे बुरे का ख्याल नहीं है। कल अगर आपकी पत्नी को कुछ हो गया, तो आप ही उसके जिम्मेवार होंगे। कहते भी हैं यथा राजा तथा प्रजा। जहाँ देखो, वहीं लोग जमा होकर ये बातें कर रहे हैं।"

राम को यह सुनकर बड़ा दुःख हुआ। उन्होंने अपने और मित्रों से पूछा—"क्या यह ठीक है?" सबने सिर झुकाकर कहा—"यह ठीक है।"

राम ने उन सबको भेज दिया। पास खड़े द्वारपालक को बुलाकर कहा—"लक्ष्मण और भरत, शत्रुघ्न को बुलाकर लाओ।" जल्दी ही तीनों राम के पास आये। आँसू बहाते हुए राम ने अपने तीनों भाइयों का आलिंगन किया। उनको बिठाकर, सीता के बारे में, जो उन्होंने बदनामी सुनी थी, वह बताई।

"सीता निर्दोष है—अग्नि और अन्य देवताओं ने कहा। मेरी आत्मा भी यही कहती है। लक्ष्मण, यह सब तुम्हारे सामने ही तो हुआ है। इसलिए सीता को अयोध्या लाया था। परन्तु यह बदनामी सहना बहुत मुश्किल हो रहा है। मैं, प्राण छोड़ सकता हूँ, तुम्हें छोड़ सकता हूँ। परन्तु अपकीर्ति नहीं सह सकता। फिर सीता को छोड़ना कौन-सी बात है? इस बदनामी से अधिक, मुझे कोई भी चीज़ दुःखी नहीं कर सकती। इसलिए लक्ष्मण कल सवेरे तुम, सीता को रथ में ले जाकर, तमसा नदी के किनारे, वाल्मीकी के आश्रम प्रान्त में, जंगल में छोड़ आओ। मेरी बात का विरोध न करो। सीता को भी इस बारे में न बताओ। शपथ करो कि नहीं कहोगे। सीता ने ऋषियों के आश्रम देखने के लिए कहा था। मैं उसकी

इच्छा ही पूरी कर रहा हूँ।" राम ने यह कहा। फिर वे लम्बी लम्बी साँसे लेते, अन्तःपुर में चले गये।

अगले दिन सवेरे, लक्ष्मण सुमन्त्र के पास गया। उसने अजीब चेहरा बना रखा था। मुख सूखा जा रहा था। उसने सुमन्त्र से कहा—"राम की आज्ञा है कि सीता को मुनियों के आश्रम ले जाया जाये। तुरत रथ तैयार करो। सीता के लिए राजमहल से, अच्छे गद्दे लाकर, रथ में रखो।"

सुमन्त्र के रथ तैयार करके लाते ही, लक्ष्मण सीता के पास गया। "लगता है, राजा ने कहा है कि आप आश्रम देखना चाहती हैं। राजा की आज्ञा हो गई है। चलिए, गंगा तट के आश्रमों में चले। भाई की आज्ञा के अनुसार मैं भी आपके साथ आऊँगा।"

सीता यह सुनकर बड़ी खुशी हुई। मुनि पत्नियों के लिए बहुमूल्य वस्त्र, रत्न, गहने साथ लेकर, रथ में निकल पड़ी। रथ तेज़ी से जा रहा था कि सीता को दुश्शकुन दिखाई देने लगे। लक्ष्मण से उन्होंने इस बारे में कहा भी—"सास वगैरह सब सकुशल हैं न?" यद्यपि लक्ष्मण अन्दर ही

अन्दर भयभीत थे, तो भी उन्होंने ऊपर से कहा—"वे सब तो सकुशल हैं।"

रात होते होते गोमती के तट पर पहुँचे। वह रात वहाँ बिठाकर, वे सवेरे फिर निकले और दुपहर तक गंगा के किनारे पहुँचे। गंगा को देखते ही लक्ष्मण अपना दुःख काबू में न रख सके। यह देख सीता ने पूछा—"लक्ष्मण! क्यों रो रहे हो? कितने ही दिनों बाद आज मेरी इच्छा पूरी हो रही है और तुम मेरे आनन्द को रोककर यूँ क्यों कम कर रही हो? मुझे जल्दी, गंगा पार करके मुनियों

के आश्रमों में ले जाओ। मुनियों की पत्नियों को ये सब उपहार दूँगी। वहाँ यह रात काटकर कल सवेरे अयोध्या चलेंगे। राम को फिर देखने के लिए मैं उतावला हो रही हूँ।" सीता ने कहा।

लक्ष्मण ने आँखें पोंछीं। पास खड़े किश्तीवाले को बुलवाया। किश्ती की व्यवस्था करके, उसमें सीता के साथ उसने गंगा पार की। सुमन्त्र रथ के साथ इस किनारे ही रह गया।

उस पार पहुँचकर, लक्ष्मण ने सीता के सामने हाथ जोड़कर, कहा—"मेरे भाई ने मेरे हृदय में मानों भाला चुभा दिया है। इतना गन्दा काम करने से तो यही अच्छा था कि मैं मर जाता।" यह कहता, वह दुःख में ढ़ह-सा गया।

सीता उसकी स्थिति देखकर घबराई। "लक्ष्मण, मुझे तुम्हारी बातें बिल्कुल समझ में नहीं आ रही हैं। तुम किसी आवेश में मालूम होते हो। तुम्हारी क्या शिकायत है, ज़रा साफ़ साफ़ बताओ। नहीं तो...."

तब लक्ष्मण ने सीता से कहा—"मेरा भाई, मित्रों से गप्पें कर रहे थे कि उन्होंने तुम्हारी निन्दा सुनी। ऐसी निन्दा कि वह तुम्हारे कानों तक नहीं पहुँचनी चाहिए। उस निन्दा के कारण, उन्होंने आपको छोड़ दिया। मैं जानता हूँ और मेरे भाई जानते हैं कि आप निर्दोष हो। परन्तु निन्दा के भय से वे यह कर रहे हैं। मुझे, तुम्हें यहाँ ही छोड़कर अयोध्या वापिस जाना है। यह राजा की आज्ञा है। आप अधिक दुःखी न हों और इस पुण्य आश्रमों के प्रदेश में रहिये। वाल्मीकी महामुनि, हमारे पिता के सन्निहित मित्र हैं। उनके पास आप सुख से रहिये।"

सीता यह सुनकर भौचक्का रह गई। फिर वे सम्भलीं और धीमे धीमे रोते रोते कहा—"लक्ष्मण, मैं कष्ट उठाने के लिए ही पैदा हुई हूँ। शायद मैंने पिछले जन्म में कोई गलती की होगी, किसी दम्पत्ति को अलग किया होगा। बनवास में, यद्यपि राम, मेरे पास थे और मुझे आश्वासन देते रहते थे, तब भी मैं दुःखी थी। अब यह कल्पना करो, बिना राम के साथ के, यह बनवास कितना भयंकर होगा। मैं अपना रोना किसके सामने रोऊँ? जब मुनि पूछेंगे कि तुम्हारे पति ने तुमको क्यों छोड़ दिया, तो मैं क्या जवाब दूँगी? इस गंगा नदी में डूबकर मरा जा सकता है, पर उससे तुम्हारे वंश का उपहास किया जा सकता है। तुमने भाई की आज्ञा पूरी कर दी। अब तुम जाओ भाई। सासों को मेरा प्रणाम कहना। राजा को साष्टाङ्ग नमस्कार कहना और कहना कि मैंने उनका कुशल क्षेम पूछा था। उनकी निन्दा को दूर करना मेरा कर्तव्य है। उनसे कहना कि धर्म पूर्वक राज्य करते, भाइयों और प्रजा को एक ही तरह देखते, वे अमर कीर्ति पायें, यही मेरी इच्छा है।"

लक्ष्मण ने कुछ न कहा। रोते रोते, उसने उनको साष्टाङ्ग नमस्कार किया। उनकी प्रदक्षिणा की। किश्ती में, उत्तरी तट पर गया। रथ पर सवार होकर, अनाथ की तरह परले किनारे पर खड़ी सीता को रह रहकर देखता चला गया। सीता उस रथ की ओर कुछ देर तक देखती रही। फिर बिलख बिलखकर रोने लगी। उसके रोने के कारण सूना जंगल गूँजने लगा।

मुदावती की कथा

बिन्दुरथ नाम के राजा के दो लड़के थे, जिनका नाम सुनीति और सुमति था और मुदावती नाम की एक लड़की थी। मुदावती सुन्दर तो थी ही, संगीत और साहित्य में भी प्रवीण थी।

एक दिन बिन्दुरथ शिकार के लिए जंगल में गया। जब वह जंगली जानवरों का शिकार कर रहा था, तो उसने एक बड़ी खोह देखी। वह बहुत चौड़ी और गहरी थी। वह सोच ही रहा था कि कैसे उसके बारे में जाना जाये कि उस तरफ़ एक ऋषि आया। राजा ने उस ऋषि को नमस्कार करके पूछा—"स्वामी, यह खोह कैसे बन गयी? इसकी क्या कथा है?"

"राजा, यह खोह पाताल तक जाती है। इसमें एक राक्षस है। इसका नाम कुजुम्भ है। वह अपने नगर से, इस खोह के द्वारा भूमि पर आता रहता है। उसके पास सुनन्द नाम का मूसल है। उसकी मदद से, वह जिसको चाहे जीत सकता है। विश्वकर्मा ने उस मूसल को तैयार किया था, पर इस कुजुम्भ ने उसको चुरा लिया। यह जानकर, विश्वकर्मा ने शाप दिया कि यदि किसी स्त्री ने उसको छुआ, तो उसकी शक्ति जाती रहेगी। यह कुजुम्भ नहीं जानता है। उसने इस मूसल से ही यह गुफ़ा बनायी थी।" ऋषि यह कहकर चला गया।

इसके बाद बिन्दुरथ शिकार करके, अपने नगर गया। जो कुछ उसने कुजुम्भ के बारे में सुना था, उसके बारे में उसने अपने परिवार को और अधिकारियों को बताया।

अन्तिम पृष्ठ

कुछ दिन बाद मुदावती अपनी सहेलियों के साथ एक दिन शाम को, वन में विहार कर रही थी कि कुजुम्भ भटकता भटकता उस तरफ़ आया और राजकुमारी के सौन्दर्य को देखकर, वह जबर्दस्ती उसको उठाकर, गुफ़ा में से अपने नगर ले गया। मुदावती की सहेलियाँ चिल्लाती चीखती राजा के पास गईं और सारी बात उसे सुनायी।

राजा, मन्त्री और पुरोहित आदि बड़े शोक में डूब गये और सोचने लगे कि राक्षस को कैसे जीता जाये। तब सुमति और सुनीति ने, अपने पिता को वचन दिया कि वे जाकर राक्षस को मारकर अपनी बहिन को छुड़ा लायेंगे। पिता इसके लिए मान गया।

मुदावती, जब राक्षस ने उसे पकड़ लिया, तो शुरु शुरु में बड़ी व्याकुल हुई। फिर उसने धीरज करके सोचा कि राक्षस का विरोध करने से तो अच्छा यही था कि उसको अच्छी बातों से मनाया जाये।

कुजुम्भ, मुदावती को अपने महल में ले गया। उसे पीने के लिए अच्छे पेय दिये। "तुम किसकी लड़की हो? तुम्हारा नाम क्या है?" जब उसने बताया कि उसका नाम मुदावती था और बिन्दुरथ की लड़की थी, तो उसने कहा—"मैं तुम्हारे सौन्दर्य पर मुग्ध हूँ। मुझे सन्तुष्ट करो।"

"और क्या चाहिए? मेरे माँ-बाप ने मेरा महापराक्रमी से विवाह करने का निश्चय किया था, फिर उन्होंने निश्चय किया कि तुम से बड़ा पराक्रमी कोई नहीं है। मैं क्षत्रिय कन्या हूँ, इसलिए जब तक हम दोनों का शास्त्रोक्त रीति से विवाह नहीं हो जाता, तब तक ज़रा ठहरो।" मुदावती ने कहा और राक्षस इसके लिए मान गया।

पर जब अगले दिन सुनीति और सुमति उससे युद्ध करने के लिए आये, तो राक्षस ने मुदावती के पास आकर कहा—"तुम तो कह रहे थे कि तुम्हारे लोग, तुम्हारी मुझसे शादी करेंगे, पर वे तो हमसे लड़ने आये हैं!"

"तुम मुझे, बिना किसी को बताये, उठा जो लाये थे, इसलिए वे क्रुद्ध हो गये होंगे। तुम उनसे क्या युद्ध करोगे! उनको पकड़ लो।" मुदावती ने कहा।

यह बातें राक्षस को खूब जंची। उसने माया से दोनों को पकड़कर कैद कर लिया। उनके लोगों ने राजा के पास जाकर कहा कि राक्षस ने राजकुमारों को पकड़ लिया था।

बिन्दुरथ ने सोचा कि राक्षस को जीतने के लिए छोटे मोटे उपाय बेकार थे। उसने नाना देश के राजाओं को बताया कि कैसे कुजुम्भ उसकी लड़की मुदावती को उठा ले गया था और कैसे उसके लड़कों को, जो अपनी बहिन को छुड़ाने गये थे, उसने कैद कर लिया था। "जो कोई मेरी लड़की को छुड़ाकर लायेगा, मैं उसके साथ अपनी लड़की की शादी कर दूँगा।" उसने लिखा। उसने उन सबकी एक सभा भी बुलायी।

इस सभा में आये हुए लोगों में जनन्द राजा का लड़का वत्सन्धु भी था। उसने अपने पिता से कहा—"पिताजी, यदि आप अनुमति दें, तो मैं राक्षस को जीतकर, बिन्दुरथ की लड़की को छुड़ाकर लाऊँगा।"

जनन्द ने कहा—"तो जाओ। परन्तु चौकस रहना। वह राक्षस बड़ा बलवान है। उसको जीतने के लिए भगवान की सहायता की ज़रूरत है। इसलिए अपने वंश के मूल पुरुष सूर्य की कृपा प्राप्त करने के बाद, राक्षस पर हमला करना।"

वत्सन्धु ने सूर्य का ध्यान किया। अपनी सेना के साथ बिन्दुरथ महाराज के पास गया। उसने उससे कहा कि वह राक्षस से लड़ने जा रहा था। वह बिन्दुरथ का आशीर्वाद पाकर कुजुम्भ के नगर गया।

जब कुजम्भ को पता लगा कि कोई उस पर आक्रमण करने आया था, बड़ा बिगड़ा। अपना मूसल लेकर, शत्रु का मुकाबला करने के लिए जाते समय, उसने मुदावती से यह बात कही।

"तुम इतनी बड़ी सेना के विरुद्ध लड़ने मत जाओ। कोई भी आपत्ति आ सकती है।" मुदावती ने कहा।

"पगली, जब तक यह मूसल मेरे हाथ में है, भगवान भी मेरा कुछ नहीं बिगाड़ सकते हैं।" कहते हुए राक्षस ने मुदावती को मूसल की महिमा बतायी।

मुदावती ने उस मूसल को अपने हाथ में लिया। उसे छूकर कहा—"जब तुम्हारे हाथ में यह शस्त्र है, तब तुम्हें क्या भय है!" उसे वह देकर, युद्ध के लिए भेजा। उसके छूने के कारण विश्वकर्मा का शाप लगा और उस मूसल की शक्ति जाती रही। कुजुम्भ वत्सन्धु से लड़ने गया और युद्ध में उसके हाथ मारा गया।

फिर वत्सन्धु ने सुनीति और सुमति को कैद से छुड़ाया। मुदावती को साथ लेकर वापिस चला आया। बिन्दुरथ ने उसका मुदावती के साथ विवाह कर दिया। कुजुम्भ के नगर को लूटकर जो धन उसका दामाद लाया था, वह सारा धन उसने उसको ही दे दिया। क्योंकि मुदावती ने सुनन्द नाम के मूसल को निश्शक्त कर दिया था, इसलिए उसका नाम सुनन्द भी पड़ा।

५२. बादशाह की मस्जिद

लाहौर के इस मस्जिद को इस्लाम धर्म के कट्टर अनुयायी औरन्गजेब बादशाह ने १६७४ में बनवाया था। शायर मोहम्मद इकबाल की कब्र इसके द्वार के पास ही है।

Photo by Naren V. Mithani
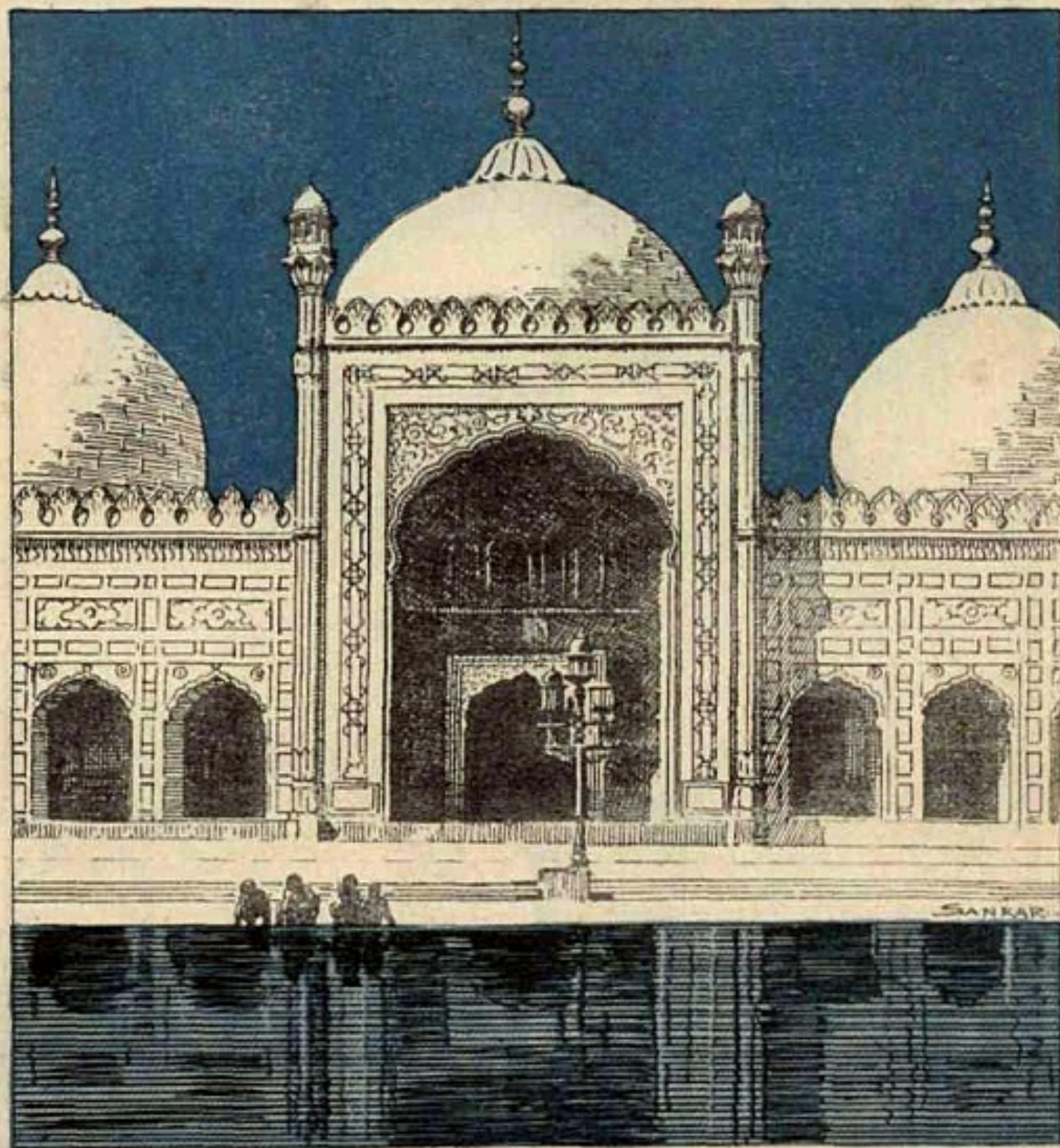
पुरस्कृत
परिचयोक्ति

मुझको पक्षी से है प्यार!

प्रेषक:
श्वेतकमल भार्गव - मथुरा

Photo by K. N. Malli

पुरस्कृत परिचयोक्ति

पक्षी को बादल से आर!!

प्रेषक: श्वेतकमल भार्गव - मथुरा

फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता

जून १९६६ :: पारितोषिक १०)

कृपया परिचयोक्तियाँ कार्ड पर ही भेजें!

ऊपर के फ़ोटो के लिए उपयुक्त परिचयोक्तियाँ चाहिए। परिचयोक्तियाँ दो तीन शब्द की हों और परस्पर संबन्धित हों। परिचयोक्तियाँ पूरे नाम और पते के साथ कार्ड पर ही लिखकर निम्नलिखित पते पर तारीख ७ अप्रैल १९६६ के अन्दर भेजनी चाहिए।

फ़ोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता
चन्दामामा प्रकाशन,
वड़पलनी, मद्रास-२६

अप्रैल – प्रतियोगिता – फल

अप्रैल के फ़ोटो के लिए निम्नलिखित परिचयोक्तियाँ चुनी गई हैं।
इनके प्रेषक को १० रुपये का पुरस्कार मिलेगा।

पहिला फ़ोटो : **मुझको पक्षी से है प्यार!**
दूसरा फ़ोटो : **पक्षी को बादल से आर!!**

प्रेषक : श्वेतकमल भार्गव,
C/o पृथ्वीनाथ भार्गव, शीतल घाटी, चौआ मण्डी - मथुरा (यू.पी.)

Printed by B. NAGI REDDI at The B. N. K. Press Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for Sarada Binding Works,

आपकी पसंद
बेडेकर उत्पादन
मसाला - आचार - पापड
बेडेकर मसालेवाले
बम्बई - ४
B. Vasant 265
MANGO
PICKLE
पापड
બેડેકર
પાપડ
बेडेकर
मसाला